THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_178771
UNIVERSAL LIBRARY

उपमन्यु के पत्र

लेखक—
श्री रामजीलाल बधौतिया
एम० ए०, साहित्यरत्न ।

विनोद पुस्तक मन्दिर
हास्पिटल रोड, आगरा ।

प्रथम बार] १९५१

प्रकाशक—
विनोद पुस्तक मन्दिर
हास्पिटल रोड, आगरा।

मुद्रक—
बालकृष्ण बंसल
बंसल प्रेस, आगरा।

कृति और कृतज्ञता

प्रस्तुत पुस्तक 'उपमन्यु के पत्र' प्रकाशित रूप में लाने का श्रेय विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा के अध्यक्ष तथा हैदराबाद निवासी, पण्डित दीनदयाल जी को है। पण्डित जी से मेरा परिचय दो वर्ष पूर्व 'रामेश्वर यात्रा' के समय रेल में धार्मिक यात्री के रूप में हुआ था। उनके पुत्र उपमन्यु की जिज्ञासा की प्रवृति ने मुझको अत्यन्त प्रभावित किया। पत्र आते जाते रहे। मेरी अन्य कृति 'गुरु के पत्र' को देखकर पंडित जी ने मुझे 'साहित्यिक यात्री' की उपाधि भी दे दी। साथ ही उपमन्यु ने वैसे ही लम्बे पत्र लिखने का अनुरोध किया। मैं पत्र लिखता रहा।

वस्तुतः इस कृति को उसी अनुरोध का फल कहूँ या रामेश्वर यात्रा का, यह अभी मैं निश्चित नहीं कर पाया हूँ। पुस्तक में नित्य नवीनता लाने के लिए पत्र प्रेषक का स्थान, दिनाङ्क, आदि छोड़ दिए गये हैं। साथ ही कौटुम्बिक तथा निजी बातों का स्थान नहीं दिया गया है।

यदि मेरे इस प्रयास से जिज्ञासुओं को लाभ हुआ तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा—

सादाबाद, मथुरा।
दीपावली, २००८ वि०

रामजीलाल बधौतिया
एम० ए, सा० र०

विषय सूची

		पृष्ठाङ्क
प्रथम पत्र	विजयिनी काँग्रेस का इतिहास और उसकी सफलता	१
द्वितीय पत्र	संसार के धर्म	६
तृतीय पत्र	प्रगतिशील मानव की दासी-बिजली	२०
चतुर्थ पत्र	देश निर्माता	२७
पञ्चम पत्र	मुसलमान कवि और हिन्दी सेवा	३६
षष्टम पत्र	कर्तव्य और चरित्र निर्माण	४५
सप्तम पत्र	मेरी मक्का की यात्रा	५५
अष्टम पत्र	जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी	६४
नवम पत्र	हमारे दो कर्णधार	७२
दशम पत्र	बापू की एक सीख	८२
एकादश पत्र	विश्व-प्रेम और लोक-सेवा	९१

प्रथम पत्र

विजयिनी कांग्रेस का इतिहास और उसकी सफलता

प्रिय उपमन्यु

इस पत्र में मेरा विचार तुम्हें 'काँग्रेस के इतिहास तथा उसकी सफलता' के विषय में कुछ ज्ञान कराने का है। विश्व के इतिहास में हमारी काँग्रेस के अतिरिक्त कदाचित् ही कोई ऐसी संस्था रही हो जिसने अहिंसात्मक साधनों द्वारा शताब्दियों से पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े हुए अपने देश को मुक्त किया हो। यह श्रेय केवल हमारी भारतीय काँग्रेस ही को है। काँग्रेस की यह महत्व-पूर्ण सफलता है। विश्व के अन्य राष्ट्र इस सफलता को देखकर आश्चर्यान्वित हैं। केवल ६६ वर्षों में ही भारतीय काँग्रेस ने देश की सामाजिक तथा राजनैतिक उन्नति कर दिखाई है। इस प्रकार काँग्रेस का इतिहास केवल सन् १८८५ ईसाब्द से अब तक का इतिहास है।

सन् १८८४ ईसवी में भारतीय काँग्रेस की स्थापना अँगरेज जाति के एक सज्जन श्री एलेवह्यूम की प्रेरणा से हुई। उनका विचार था कि प्रतिवर्ष इस संस्था का वार्षिक जलसा हो जाया करे। उसमें समाज सेवक व्यक्ति एकत्रित होकर पारस्परिक परिचय प्राप्त कर सामाजिक उत्थान के लिए नवीन योजनाएँ बनावें। श्री ह्यूम की इच्छा थी कि इस संस्था की शाखाएँ प्रान्तों में भी स्थापित हों और प्रान्तों के गवर्नर अपने-अपने प्रान्त की संस्था के अध्यक्ष हों। वायसराय ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया

और कहा 'ऐसी संस्था का अध्यक्ष गवर्नर नहीं होना चाहिए क्योंकि तब लोग सरकार की आलोचना करने में झिझकेंगे। इस संगठन को न केवल समाज-सुधार ही बल्कि देश के राजनीतिज्ञों को देश की वास्तविक स्थिति और उचित माँग को हमारे सामने उपस्थित करना चाहिए और हमारी सरकार में जो कमी हो उसकी ओर हमारा ध्यान दिलाना चाहिए।' इस प्रकार इस संस्था की स्थापना सामाजिक और राजनैतिक उद्देश्यों को लेकर हुई। इस संस्था का प्रथम अधिवेशन २८ दिसम्बर सन् १८८५ ई० को गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कालिज भवन बम्बई में श्री उमेशचन्द्र बनर्जी की अध्यक्षता में हुआ। प्रथम अधिवेशन में जो प्रस्ताव पास हुए, उनका सारांश यह है कि भारत के शासन कार्य की जाँच के लिए एक रायल कमीशन बैठे, इण्डिया कौन्सिल तोड़ी जाए, आई० सी० ऐस० परीक्षाएँ भारतवर्ष में हों, बर्मा को भारत में सम्मिलित किया जाए, आदि आदि। इस प्रकार लगभग दस वर्ष तक प्रत्येक वार्षिक अधिवेशन में इन्हीं प्रस्तावों की पुनरावृत्ति रही।

सन् १८९६ ईसवी के पश्चात् श्री लोकमान्य तिलक जी ने काँग्रेस में नवीन साहस उत्पन्न किया। उन्होंने काँग्रेस में आते ही सरकार की कटु आलोचना करना प्रारम्भ कर दिया। वह उग्र विचारों के थे। देश के साहसी, उत्साही युवकों ने उनका समर्थन किया। सरकार सचेत हुई। सरकार ने हिन्दू और मुसलमानों को पृथक पृथक घोषित कर इस संस्था का अन्त करना चाहा किन्तु राष्ट्रीय भावनाएँ बढ़ती गयीं। सरकार के दोषों पर प्रकाश डाला जाने लगा। बंगाल ने विरोध का नेतृत्व किया। शासक भयभीत हुए। लार्ड कर्जन ने सन् १९०५ में विरोधियों की शक्ति को कम करने के लिए बंग-विच्छेद की योजना को घोषित कर दिया और साथ

हीं भारतीयों के चरित्र को असत्यमय बताया। इस पर काँग्रेस द्वारा उग्र एवं व्यापक आन्दोलन किया गया। जनता में देश प्रेम की लहर फैल गई। क्रान्तकारियों ने गोलियों तथा बमों की बर्षा कर शासकों को अपनी शक्ति की चेतावनी दी। नौकर-शाही ने विरोधियों को दबाने के लिए अपना दमनचक्र पूर्ण वेग के साथ चलाया। किंतु इस दमन चक्र में सरकार को विरोधियों के सामने अपने घुटने टेकने पड़े। अब काँग्रेस में गरम और नरम दो दल हो गये। सन् १६०७ में काँग्रेस के दोनों दलों में काफी वाद-विवाद रहा। अधिवेशन स्थगित हुआ। गरम दल के नेता श्री लोकमान्य तिलक थे। सरकार ने कुछ नेताओं पर अभियोग चलाये। सरदार अजीतसिंह, राजा महेन्द्रप्रताप आदि महान् पुरुषों को देश से निकालने का दण्ड दिया गया। श्री अरविन्द जी को कारागार में डाल दिया। किन्तु वंगभंग आन्दोलन में काँग्रेस को सफलता मिली। कलकत्ता अधिवेशन में दादा भाई नौरोजी की अध्यक्षता में तिलक जी के प्रयत्न से झगड़ा समाप्त होगया। तदनन्तर काँग्रेस के कार्य में शिथिलिता आगई। तिलक माण्डले जेल में डाल दिये गए। लाला लाजपतिराय अमरीका में थे। श्री गोपालकृष्ण गोखले और श्री फीरोजशाह मेहता जैसे देशभक्त स्वर्गवासी हो गये थे।

तदनन्तर सन् १६१४ ईसाब्द में प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हुआ। भारतीयों ने सहायता न देने का विचार किया। ब्रिटिश सरकार ने स्वराज्य देने का प्रलोभन देकर महायुद्ध में सहायता देने के लिए भारतवासियों से याचना की। भारतवर्ष ने तन, मन, धन से सहायता की। तदनन्तर मिसेज़ एनीवेसेन्ट की अध्यक्षता में सरकार से स्वराज्य की माँग की गयी। इस समय कांग्रेस के जीवनदाता महात्मा गाँधी भी राजनीति के क्षेत्र में कूद पड़े।

वह कुछ वर्ष तक अफ्रीका रहे थे। वहाँ उन्होंने भारतीयों को अत्यन्त गिरी हुई दशा में पाया। गोरों के भारतीयों के प्रति किये गये अत्याचारों से गाँधी जी देश प्रेम के कारण सेवाक्षेत्र में अवतरित हुए। संगठित रूप से स्वराज्य की माँग हुई। सरकार ने आना-कानी की। बस आन्दोलन का आरम्भ हुआ। सरकार ने रौलिट बिल पास किया जिसका भारतीयों ने घोर विरोध किया। क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ताओं ने संगठन किया, गुप्तरूप से हथियार मँगाये गये। विदेशी सरकार को पलटने के कार्यक्रम रक्खे गये। किन्तु सफलता न मिली। षड़यन्त्रकारी पकड़ कर जेल में डाल दिये गये। इसी कानून के विरोध में जलियाँवाला बाग़ में एक विशाल सभा हुई। इस सभा में बीस सहस्र से अधिक बालकों, स्त्रियों तथा पुरुषों ने विरोध प्रदर्शित किया। अँगरेजी सरकार ने क्रूरता से विरोधियों को दबाना चाहा। जनरल डायर ने सशस्त्र सैनिकों के साथ बाग़ को चारों ओर से घेर लिया। निहत्थे लोगों पर मशीनगनों द्वारा गोलियों की बौछार हुई। दस मिनट में १६५० राउण्ड गोलियाँ चलाई गयीं। इस गोली काण्ड में ३८० व्यक्ति मरे और ११३७ व्यक्ति घायल हुए। यह सरकारी सूचना के आँकड़े थे। सम्भव हो सकता है इससे अधिक विध्वंश हुआ हो। ऐसे अमानुषिक अत्याचार भी देश प्रेम को कम न कर सके। इन अत्याचारों से देश प्रेम की ज्वाला अधिकाधिक प्रज्वलित हो उठी।

सन् १९१८ ई० में फिर सरकार के विरुद्ध आन्दोलन शुरू हुआ। इस आन्दोलन में हिन्दुओं और मुसलमानों ने संगठित होकर सरकार के विरुद्ध आवाज उठाई। अनेक सरकारी कर्मचारियों ने भी अपने पदों से त्याग पत्र देकर आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। कौंसिलों का बहिष्कार किया गया। देशव्यापी हड़तालें हुईं। पूज्य गाँधी जी के नेतृत्व में आन्दोलन ने एक भीषण

रूप धारण कर लिया। गाँधी जी अहिंसात्मक अस्त्र का परीक्षण अफ्रीका में सफलता के साथ कर चुके थे। अतएव अहिंसात्मक तथा असहयोग आन्दोलन के द्वारा सरकार के पैर काँपने लगे। सन् १९२० ई० में 'प्रिंस आफ वेल्स' भारत आये। भारतायों ने जहाँ-जहाँ वह गये, अपना विरोध प्रदर्शन किया, पूर्ण हड़तालें हुईं। सरकार काँग्रेस के इन आन्दोलनों से घबड़ाने लगी। अतः काँग्रेस और विरोध- आन्दोलन दोनों गैर कानूनी घोषित कर दिये गये। दोनों दलों के नेताओं को कारागार में डाल दिया गया। तदनन्तर हकीम अजमल खाँ की अध्यक्षता में काँग्रेस का अधिवेशन हुआ। जनता से काँग्रेस की सहायता करने के लिए अपील की गयी। महात्मा गाँधी जी ने सक्रिय भाग लिया। उन पर अभियोग चला और सन् १९२२ ई० में ६ वर्ष की जेल का दण्ड मिला। १९२४ ई० में सरकार ने बंगाल आर्डीनेन्स पास किया। बड़ी संख्या में कार्यकर्त्ता जेल में ठूँस दिये गये। सन १९२७ ई० में मद्रास अधिवेशन में काँग्रेस ने पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग का प्रस्ताव रक्खा। १९२८ में कलकत्ता अधिवेशन में उसी प्रस्ताव की सरकार को चुनौती दी गयी। दिसम्बर सन् १९२९ ई० में काँग्रेस ने पण्डित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में रावी के तट पर २६ जनवरी को पूर्ण स्वतन्त्र होने की तिथि निश्चित करने की सपथ ग्रहण की।

तदनन्तर काँग्रेस के कार्यों को व्यापकता देने के लिए कलकत्ता अधिवेशन में विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, मादक द्रव्य-निषेद, अस्पृश्यता-निवारण, नारी जागरण, तथा काँग्रेस को सुसंगठित बनाने के लिए उप-समतियाँ बनाई गयीं। धीरे-धीरे देश के नव-युवकों में राष्ट्र प्रेम की लहर दौड़ गयी। २ जनवरी सन्१९३० ई० की बैठक में कौंसिल के बहिष्कार तथा अगामी २६ जनवरी को

स्वतन्त्रता समारोह मनाने का निश्चय किया गया। इसी अवसर पर पढ़ने के लिए एक प्रतिज्ञापत्र तैयार किया गया तथा गाँधी जी ने ऐतिहासिक ग्यारह शर्तें लार्ड इर्विन के समक्ष रक्खी, किन्तु सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया। महात्मा गाँधी जी ने सरकार की इस नीति का विरोध किया। वह नमक का कानून तोड़ने के लिए १२ मार्च सन् १९३० ई० को अपने ७१ सत्याग्रहियों के साथ दण्डी यात्रा को चल दिये। ५ अप्रेल को गाँधी जी वहाँ पहुँचे और उन्होंने अपने हाथों से नमक बनाकर कानून को तोड़ा। सारे देश में नमक के कानून का तीव्र विरोध हुआ। तदनन्तर बिदेशी बहिष्कार का आन्दोलन छिड़ा। फलतः इगलैण्ड के बड़े-बड़े कारखाने बन्द होगये।

१२ नवम्बर सन् १९३० ई० को इगलैण्ड में एक गोलमेज परिषद बुलाई गयी। काँग्रेस के सभी कार्यकर्त्ता जेल में थे। अतः उस परिषद के न्याय को देश ने कोई मान्यता नहीं दी। इस पर गाँधी इर्विन पैक्ट नामक अस्थायी समझौता हो गया। द्वितीय वार फिर गोलमेज परिषद की बैठक हुई। गाँधी जी इगलैण्ड बुलाये गये किन्तु कोई सन्तोषजनक सुझाव नहीं निकला। सन् १९३४ ई० में बम्बई अधिवेशन हुआ। महात्मा गाँधी जी ने काँग्रेस से पृथक होकर रचनात्मक कार्य करने का निश्चय किया। इस अधिवेशन के पश्चात् निर्वाचन प्रारम्भ हुए। काँग्रेस की ग्यारह सूबों में से सात सूबों में विजय हुई।

१९३९ ई० में द्वितीय महायुद्ध छिड़ गया। वायसराय ने बिना नेता लोगों का परामर्श लिए ही भारत को धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध युद्ध में सम्मिलित कर दिया। काँग्रेस ने रुष्ट होकर अपने मन्त्रिमंडलों से त्यागपत्र दे दिया। मार्च सन् १९४० ई० में काँग्रेस ने अँगरेजी सरकार के विरुद्ध प्रस्ताव पास किया।

सन् १९४२ ईसवी में भारत में क्रान्ति की लहर उठी। ८ अगस्त सन् १९४२ को बम्बई के अधिवेशन में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया। साथ ही 'करेंगे या मरेंगे' के नारे लगाये। ९ अगस्त को कार्य समिति के सभी सदस्य तथा नेता लोग गिरफ्तार कर लिये गये।

सारे देश में क्रांति की अग्नि प्रज्वलित हुई। रेल, तार, डाकखाने, सरकारी भवन नष्ट किये गये। विदेशियों का बध किया गया। सरकार सचेत हुई। इगलैण्ड में मजदूर सरकार को बनते ही काँग्रेस से समझौते की बातचीत होने लगी। फलतः ब्रिटिश कैबिनेट मिशन भारत में आया। २ सितम्बर सन् १९४६ ई० को काँग्रेस ने अन्तरिम सरकार का निर्माण किया। मुसलिम लीग ने उसमें भाग नहीं लिया। उसने दंगे करना प्रारम्भ कर दिया। दंगों की भयङ्करता से ब्रिटिश सरकार के पैर कँपने लगे। १५ अगस्त सन् १९४७ ई० को भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। भारत के दो खण्ड हिन्दुस्तान और पाकिस्तान होने के कारण भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए। विश्व के इतिहास में अभूत पूर्व घटनाएँ हुईं। जून सन् १९४८ ईसवी में अँगरेज पूर्ण सत्ता देकर अपने देश को विदा हुए। काँग्रेस ने देश के शासन की बागडोर सँभाली। २६ जनवरी सन् १९५० ई० से भारत में नवीन प्रजातन्त्र युग का श्रीगणेश हुआ। यह संक्षेप में काँग्रेस का इतिहास है।

अतः प्रिय वत्स उपमन्यु अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि देश को पराधीनता की बेड़ियों से मुक्त करने में काँग्रेस का ही हाथ है आज की स्वतन्त्रता का श्रेय काँग्रेस को ही है। भारतीय स्वतन्त्रता की प्राप्ति काँग्रेस की सबसे बड़ी सफलता है। निःसन्देह काँग्रेस ने ही देश का पथ प्रदर्शन किया है। उसने अपने ६६ वर्ष के अल्प काल में अनेक संघर्ष किये, कष्ट सहे किन्तु वह उज्वल

सफलता के साथ अपने पथ पर आगे बढ़ती रही। आज विश्व में तिरङ्गा झण्डा अन्य स्वतंत्र देशों के झण्डों की भाँति पूज्य है, इसका श्रेय काँग्रेस ही को है। ईश्वर करे काँग्रेस द्वारा प्राप्त की हुई हमारी स्वतन्त्रता अमर रहे।

तुम्हार शुभेच्छु
राम

द्वितीय पत्र

संसार के धर्म

चिरञ्जीव उपमन्यु,

प्रसन्नता है कि अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए तुम्हारी जिज्ञासा बढ़ती जाती है। पिछले पत्र में तुम्हारे प्रश्न कि 'धर्म क्या है, धर्मात्मा किसे कहते हैं और संसार के बड़े बड़े धर्म कौन कौन हैं ?, अति सुन्दर हैं। इस पत्र में मेरा विचार तुम्हारे इन्हीं प्रश्नों के समुचित उत्तर लिखना है।

प्रिय वत्स ! देखो धर्म मनुष्य जीवन का सदैव से ही प्रमुख अंग रहा है। प्राचीन काल में तो धर्म और राजनीति का निकटतम संपर्क और सम्बन्ध था। राज्य की बागडोर वस्तुतः पहले धर्माधिकारियों के हाथ में ही रहती थी। उस काल में धर्म का स्थान राजनीति से ऊपर था। किन्तु आज समय के परिवर्तन से राजनीति और धर्म भिन्न-भिन्न समझे जाते हैं। आज संसार में अशान्ति का एक मुख्य कारण यह है कि लोग धर्मात्मा नहीं हैं। इसलिए आज विश्व-कल्याण के लिये प्रत्येक मानव का कर्तव्य है कि वह धर्म को समझकर धार्मिक गुणों को अपनावे।

देखो धर्म की व्याख्या पर बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे पड़े हैं। संक्षेप में गुण, कर्तव्य, सुकर्म, दान आदि को धर्म कहते हैं। हमारे यहाँ धर्म के दस अंग बताये गये हैं। आस्तेय (चोरी न करना), धैर्य, क्षमा, शौर्य, विनय, इन्द्रिय निग्रह, पवित्रता, सदाचार, दान और सत्य। जब हम किसी मनुष्य को धर्मात्मा कहते हैं, तो हमारा तात्पर्य यह होता है कि उसमें ऊपर लिखे धैर्य, क्षमा, विनय, दान सदाचार आदि सभी गुण हैं। ये गुण मनुष्य के हृदय को उज्ज्वल

बना देते हैं। ये गुण ही मनुष्य की आत्मा को बल प्रदान करते हैं। सारांश यह है कि जिस मनुष्य में ये सभी गुण पाये जाते हैं, उसको संसार में प्रत्येक कार्य में सफलता मिलती है। एक बार किसी मनुष्य ने महात्मा ईसा से प्रश्न किया 'महात्मन् जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये कोई मंत्र बताइए।' महात्मा ईसा ने तुरन्त उत्तर दिया। 'धर्म को प्यार करो'। यदि गम्भीरतया विचार किया जाए तो धर्म मनुष्य के अंधकारपूर्ण हृदय को प्रकाशित करने के लिए सूर्य है। जब धर्म के सूर्य की किरणें मनुष्य के हृदय में प्रवेश करती हैं, तो ज्ञान की ज्योति फैलने के साथ-साथ जीवन के दुख, दरिद्र आदि भी दूर भाग जाते हैं। अस्तु प्रिय वत्स! अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि धर्म को अपनाना प्रत्येक मानव का कर्तव्य है।

तुम्हारा दूसरा प्रश्न कि 'संसार में बड़े-बड़े धर्म कौन कौन हैं', कुछ कठिन है। देखो आज का युग विज्ञान का युग है। धर्म और विज्ञान में अन्तर केवल इतना है कि धर्म हमारे धार्मिक ग्रन्थों में लिखे नियमों का अक्षरशः पालन करने के लिए हमें बाध्य करता है और विज्ञान हमें स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करने का अधिकार प्रदान करता है। धर्म कहता है कि हम उचित अनुचित दोनों को बिना सोच विचार के स्वीकार करें। विज्ञान कहता है कि बिना बिचारे किसी नियम को स्वीकार करना बुद्धिहीनता का प्रतीक है। सारांश यह है कि आज धर्म के बन्धन ढीले हैं। रूस जैसे प्रगतिशील देशों में धर्म केवल नाम मात्र को ही रह गया है। फिर भी अब भी सभी धर्मों के अनुयायी संसार में पाये जाते हैं। संसार के विभिन्न धर्मों का अध्ययन अत्यन्त रोचक है। मैं इस पत्र में संसार के मुख्य-मुख्य धर्मों के विषय में ही लिख रहा हूँ। संसार में प्रचलित निम्नलिखित धर्म मुख्य हैं।—

१—हिन्दू धर्म

यह धर्म संसार के सभी धर्मों से प्राचान है। इसका पुरातन नाम वैदिक है। इसके अनुयायी लगभग तीस करोड़ हैं। वैदिक धर्म की व्याख्या करना कठिन है क्योंकि इसके रूप, उद्देश्य, उपासना आदि की भिन्न-भिन्न विधियाँ बताई गई हैं। यह धर्म केवल एक ब्रह्म में विश्वास करता है। देवी, देवता उसी ब्रह्म के स्वरूप मात्र हैं। जीवात्मा, प्रकृति और परमात्मा को इस धर्म में नित्य माना गया है। इस धर्म के अनुसार जीव को अपने कर्मों का फल भोगने के लिए चौरासी लाख योनियों में जन्म लेना पड़ता है। अच्छे कर्म करने से जीव को मुक्ति मिल जाती है और जीव ब्रह्म में लीन हो जाता है। आत्मा और परमात्मा का मिलन इसे ही कहते हैं। एकेश्वरवाद का प्रतिपादन ही इस धर्म का मूल सिद्धांत है। वेदमन्त्रों द्वारा उपासना होती है। यज्ञ उपासना की दूसरी विधि है। कामना से जो साधन किया जाए, उसे यज्ञ कहते हैं। दान देना यज्ञ का सबसे बड़ा पुण्य है। ज्ञानार्जन द्वारा मुक्ति की प्राप्ति, तीसरी विधि कही जा सकती है। इस प्रकार वैदिक धर्म के तीन काल हैं। पहले काल को हम मन्त्र काल के नाम से पुकार सकते हैं क्योंकि इस काल में उपासना मन्त्रों द्वारा की जाती थी। दूसरा काल ब्राह्मण काल कहलाता है क्योंकि इस काल में यज्ञ को और बलि को प्रधानता दी गयी है। तीसरा काल उपनिषद् काल है। इस काल में ज्ञान तथा सत्य को प्रमुखता दी गयी है। इन्द्रिय निग्रह और योगाभ्यास भी इस काल की भक्ति के प्रधान अङ्ग हैं। आज वैदिक धर्म को हिन्दू धर्म के नाम से पुकारते हैं। हिन्दू की व्याख्या नीचे लिखे श्लोक में की गई है :—

'यो वर्णाश्रम निष्ठावान् गोभक्तः श्रुतिमातृकः।
मूर्ति च नाव जानाति सर्व धर्म समादरः॥

उत्प्रेक्षते पुनर्जन्म तस्मान्मोक्षणमीहते।
भूतानुकूल्यं भजते स वै हिंदुरिति स्मृतः॥
हिंसया दूयते चित्तं तेन हिंदुरितीरितः॥

—श्री विनोवा भावे।

अर्थात जो वर्णों और आश्रमों की व्यवस्था में निष्ठा रखने वाला, गो-सेवक, श्रुतियों को माता की भाँति पूज्य मानने वाला, तथा सब धर्मों की प्रतिष्ठा करने वाला है, देवमूर्ति की जो अवज्ञा नहीं करता, जो पुनर्जन्म में विश्वास करता है और उससे मुक्ति पाने की चेष्टा करता है, जो सदैव सब प्राणियों के अनुकूल बर्ताव करता है, वही हिन्दू माना गया है। जिसका हिंसा से चित्त दुखी होता है, वह हिन्दू कहा गया है।

हिन्दू धर्म के निम्नलिखित १६ अङ्क माने गये हैं :—

(१) सदाचार।
(२) सद्विचार।
(३) वर्ण धर्म।
(४) सतीत्व धर्म।
(५) आश्रम धर्म।
(६) अवतारवाद में विश्वास।
(७) यज्ञादि में विश्वास।
(८) पुनर्जन्म में विश्वास।
(९) मोक्ष में विश्वास।
(१०) कर्म और संस्कारों में विश्वास।
(११) धार्मिक ग्रन्थ वेद आदि में विश्वास।
(१२) देव जगत में विश्वास।
(१३) निर्गुण, सगुण की पूजा में विश्वास।
(१४) योगमूलक तथा भक्ति मूलक उपासना पद्धति।

(१५) सर्व व्यापक भगवत्सत्ता की उपासना करना।

(१६) शुद्धाशुद्ध विवेक तथा स्पर्शास्पर्श विवेक।

'ऋगवेद', 'सामवेद', 'यजुर्वेद' और 'अथर्ववेद' हिन्दू धर्म के सबसे प्राचीन ग्रन्थ माने जाते हैं। हिन्दुओं का विश्वास है कि वे ब्रह्मा द्वारा ही लिखे गये हैं। इनके अतिरिक्त ५४ उपनिषद् हैं। वर्तमान काल में 'श्रीमद्भगवद्गीता' और 'रामायण' सबसे अधिक प्रचलित पुस्तकें हैं। 'राम' और 'कृष्ण' सबसे बड़े ईश्वर के अवतार माने गये हैं।

२—जैन धर्म

वैदिक धर्म के कर्म काण्ड के विरोध में छः शताब्दी पूर्वेसा जैन धर्म का जन्म हुआ। इस धर्म के संस्थापक महावीर स्वामी थे। जैन धर्म के अनुयायियों की संख्या लगभग १४ लाख है। ये लोग वेद पुराण आदि में किंचिनमात्र भी विश्वास नहीं रखते हैं। जाँतिपाँति तथा मूर्ति पूजा के भी ये लोग विरोधी हैं। इनके दो सम्प्रदाय हैं। प्रथम 'श्वेताम्बर' जो श्वेत वस्त्र पहनते हैं। दूसरे जो नंगे रहते हैं। साधारणतया जैनी लोग हिन्दुओं की रीतियों को मानते हैं। इस धर्म के मुख्य-मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :—

(१) अहिंसा में पूर्ण विश्वास।

(२) ईश्वर तथा देवताओं में विश्वास।

(३) श्रद्धा, ज्ञान, और सदाचार में पूर्ण विश्वास।

(४) कर्म, सिद्धान्त तथा कठोर संयम में विश्वास।

(५) मनुष्य को प्रयत्नशील होना चाहिए तथा कर्म का उत्तरदायी।

'आगम' जैन धर्म की मुख्य पुस्तक है।

३—बौद्ध धर्म

इस धर्म का जन्म भी जैन धर्म की भांति वैदिक धर्म के कर्म काण्ड के विरोध में हुआ। भगवान् गौतम बुद्ध इस धर्म के जन्म

दाता कहे जायँगे। सम्राट अशोक ने इस धर्म का प्रचार सारे एशिया में किया। जैन धर्म के समान बौद्ध धर्म भी हिन्दू धर्म का अंग ही कहा जायगा। भारतवर्ष में बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या कम है। चीन, जापान, तिब्बत, वर्मा, श्याम में इस धर्म के अनुयायी हैं। इस धर्म के भी दो सम्प्रदाय है—'हीनयान' और 'महायान'। हीनयान सम्प्रदाय के लोग बुद्ध की शिक्षाओं का अक्षरशः पालन करने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझते हैं। महायान सम्प्रदाय के लोग गौतम बुद्ध की मूर्ति को भगवान् मानकर पूजा करते हैं। भगवान् बुद्ध की मुख्य शिक्षाएँ ही इस धर्म के सिद्धान्त हैं। संसार के सारे प्राणी दुख से पीड़ित हैं। इसका कारण मोह और तृष्णा है। अतः दुख से मुक्ति पाने के लिए इन्द्रिय-निग्रह, भोग विलास का परित्याग तथा पवित्र जीवन व्यतीत करना अति आवश्यक हैं।

इस धर्म के आठ लक्षण है—

१—समान दृष्टि।
२—सम्यक् संकल्प।
३—सम्यक् वाक्य।
४—सम्यक् कर्मान्तर।
५—सम्यक् आजीव।
६—सम्यक् व्यायाम।
७—सम्यक् स्मृति।
८—सम्यक् समाधि।

बौद्ध धर्म के धार्मिक ग्रन्थ त्रिपिटक कहलाते हैं।

४—सिक्ख धर्म

गुरु नानक सिक्ख धर्म के संस्थापक कहे जाते हैं। नानक जी का जन्म संवत् १४६५ विक्रमी के लगभग बताया जाता है। यह

धर्म अति उदार है। इस धर्म में हिन्दू धर्म की भांति जाति-पांति का भेदभाव नहीं है। यह धर्म एक ईश्वर में विश्वास करता है। वही अनेक रूपों में प्रकाशित होता है। ज्ञान द्वारा मुक्ति सम्भव है। मन की बुद्धि भी ज्ञान के लिये अति आवश्यक है। किन्तु बिना गुरु के मुक्ति असम्भव है। अर्थात् ईश्वर प्राप्ति के लिए गुरु अति आवश्यक है। मुसलमानों के अत्याचारों से पीड़ित होकर इस धर्म ने सैनिक वेष अपनाया। इस प्रकार सिक्ख धर्म के भी दो सम्प्रदाय हो गये। प्रथम जो शान्तिमय जीवन व्यतीत करतेहैं, वे 'नानक पंथी' कहलाये। द्वितीय गुरु गोविन्दसिंह के अनुयायी 'खालसा पंथी' कहलाये। वह पांच अस्त्र धारण करते हैं—केश, कंघा, कच्छ, कड़ा और कृपाण। सिक्ख धर्म के दस गुरु माने जाते हैं:—

नानक, अङ्गद, अमर, रामदास, अर्जुन, हरगोविन्द, हरराम, हरकिशन, तेगबहादुर, और गोविन्दसिंह।

गुरू अर्जुन द्वारा संग्रहीत ग्रन्थ 'आदि ग्रन्थ' हैं जिसमें २६४८० पद हैं।

ये लोग भी एकेश्वरवाद, कर्म और पुर्नजन्म में विश्वास रखते हैं। मन की शुद्धि और सत्ज्ञान ईश्वर प्राप्ति के साधन हैं।

५—इस्लाम धर्म

इस्लाम धर्म की गणना संसार के बड़े धर्मों में है। सातवीं ईस्वी में इस धर्म की स्थापना हुई। हज़रत मुहम्मद साहब इसके संस्थापक माने जाते हैं। 'कुरान शरीफ' इस धर्म की धार्मिक पुस्तक है। इस धर्म के अनुयायी मूर्तिपूजा और पुर्नजन्म में विश्वास नहीं करते हैं। इनका विश्वास है कि महशूर के दिन ख़ुदा सबका न्याय करेगा और कर्मों के अनुसार स्वर्ग या नरक देगा।

इस्लाम धर्म के दो मुख्य सम्प्रदाय हैं—सुन्नी और शिया। सुन्नी सम्प्रदाय के अनुयायी 'कुरान शरीफ़' और खुदा की रीति रिवाजों में विश्वास करते हैं। शिया केवल कुरान शरीफ में विश्वाव करते हैं। इस्लाम धर्म के अनुयायियों की संख्या विश्व में सर्वत्र पाई जाती है। नमाज़ पढ़ना, रोज़ा रखना, हज जाना, 'ला इल्लाह इल्लिल्लाह, मुहम्मदरसूल इल्लाह' के कलमे को पढ़ना, दान करना, नशे की चीजों से बचना एक मुसलमान के कर्तव्य बताये गये हैं। मुहम्मद साहब की निम्नलिखित शिक्षाएँ थीः—

(१) अल्लाह (ईश्वर) में विश्वास करो।

(२) 'कुरान शरीफ' में विश्वास रक्खो।

(३) पैगम्बरों में और उनके कहे शब्दों में विश्वास रक्खो।

६—ईसाई धर्म

ईसाई धर्म की गणना भी संसार के बड़े धर्मों में होती है। इस धर्म के अनुयायी संसार में सर्वत्र पाये जाते हैं। ईसा मसीह इस धर्म के संस्थापक माने जाते हैं। इस धर्म के अनुसार ईश्व एक है। वह दयालु, न्याय प्रिय तथा सर्वज्ञ है। इस धर्म के अनुयायी मूर्तिपूजा तथा आवागमन में विश्वास नहीं रखते हैं। 'बाईबिल' इनकी धर्म पुस्तक है। हजरत मूसा द्वारा दी हुई दस आज्ञाएँ इस धर्म के मुख्य सिद्धान्त हैं।

१—मेरे अतिरिक्त किसी को ईश्वर मत मानो।

२—मूर्ति पूजा में विश्वास मत करो।

३—दासता स्वीकार मत करो।

४—माता पिता का सत्कार करो।

५—ईर्ष्या न करो।

६—चोरी मत करो।

७—अपने समीप जनों के विरुद्ध गवाही मत दो।

८—अहिंसा को अपनाओ।

९—सदाचारी बनो।

१०—ईश्वर का नाम व्यर्थ मत समझो।

७— पारसी धर्म

पारसी धर्म के अनुयायी ईश्वर के चिन्ह, सूर्य, चन्द्र, तारे, अग्नि, वायु आदि की पूजा करते हैं। इनके आराध्य 'अहरमज्द' हैं वही सृष्टिकर्त्ता, प्रकाशमय, सर्वोच्च, सर्व सुन्दर, सबसे ज्ञानी, और उदार हैं। 'अवेस्ता' इनका धार्मिक ग्रन्थ है। उनका विश्वास है कि महशर के दिन सभी मृतक उठ बैठते हैं। उसी दिन उनके कर्मों के अनुसार न्याय होता है। पवित्र लोगों को स्वर्ग और अपवित्र लोगों को नरक मिलता है। ये लोग धर्म प्रचार में विश्वास नहीं रखते हैं। फारस से इस धर्म का जन्म हुआ। भारतवर्ष में पारसियों की जन संख्या ११ लाख है।

८—टेओइज़्म

इस धर्म के अनुयायी चीन में पाये जाते हैं। Lao Tyu इस धर्म के संस्थापक थे। उनका जन्म ६०४ पूर्वेसा हुआ था। इन्होंने Tao Te ching नामक ग्रन्थ लिखा। यह इनका धार्मिक ग्रन्थ है। तदनन्तर Chaung Tyu ने तीसरी शताब्दी में इस धर्म का प्रचार किया। चौथी शताब्दी में Leih Tyu ने भी इसी धर्म का प्रचार किया। इस धर्म में जगत की आकस्मिक उत्पत्ति, ईश्वर की सत्ता और सत्यता पर जोर दिया है। जगत के कार्य जलधार के समान परिवर्तित होते रहते हैं। इस शाश्वत परिवर्तन के पीछे अनित्य सत्य छिपा है। उसी छिपे सत्य को हम Tao (टे) के नाम से पुकार सकते हैं। इसका न आदि और न अन्त है। यही सर्वस्व है। यह वह प्रकाश है जो जगत में व्याप्त है। इसी से संसार में सभी वस्तुओं का जन्म होता है।

अन्त में सभी उसी प्रकाश में मिल जाते हैं। यह प्रकाश निर्गुण ब्रह्म के समान है। न इसका कोई रूप है, न रंग, न आकार। न उसे हम देख सकते हैं और न स्पर्श कर सकते हैं। उसका अस्तित्व स्वावलम्बित है। किन्तु सभी वस्तुएँ टेओ पर निर्भर रहती हैं। पुरुष (yang) प्रकृति (yin) के कार्यान्वित होने से पूर्व विद्यमान वस्तु का नाम ही टेओ है। वास्तव में टेओ ब्रह्म भी है और आत्मा भी। संसार में झूठ सुखों में फँसकर हम टेओ को भूल जाते हैं। टेओ की प्राप्ति का एक मात्र साधन सांसारिक लालसाओं तथा सुखों का परित्याग है। योग, आदि आसन भी टेओ की प्राप्ति हमें सहायता प्रदान कर सकते हैं। दया अहिंसा आदि भी टेओ की प्राप्ति के लिए आवश्यक अंग हैं। यदि वास्तविक रूप से देखा जाय तो टेओ धर्म के अनुयायिओं का जीवन सदाचार का जीवन है। युद्ध टेओ धर्म के विरुद्ध है। यदि टेओ धर्म के अनुयायी आज सारे संसार में हो जाएँ, तो शान्ति पूर्ण-रूप से स्थापित हो सकती है।

९—सिनोटी सिज़्म

यह चीन का प्राचीनतम धर्म है। डा० हू० शीह इस धर्म के संस्थापक कहे जाते हैं इस धर्म के मानने वाले ईश्वर को ही सर्व शक्तिमान, सर्वत्र व्याप्त मानते हैं। मृतक प्राणियों के प्रेतात्मा में भी ये लोग विश्वास करते हैं। इस धर्म का अब चीन में प्रचार नहीं है और अब यह विलीन होगया है। इस धर्म की विशेषता ये हैं। प्रकृति की पूजा, कर्मों के फल में विश्वास और अनागत के कथन में पूर्ण विश्वास।

१०—कन्फ़्युशियनिज़्म

कनफ़्युशिश नामक एक धार्मिक व्यक्ति ने इस धर्म को ईसा से पाँच शताब्दी पूर्व संस्थापित किया। वह, उदार, समाज सेवक

तथा विद्वान पुरुष था। उसका कहना था कि माता पिता की सेवा, अपने समीप जनों की सेवा, जन सेवा में ही मानव-जीवन की सार्थकता है। वह प्राचीन धर्म और प्राचीन प्रणालियों का अनुयायी था। उसके कथन के अनुसार ईश्वरोपासना, पूर्वजों, पर्वतों, सरिताओं, प्रेतात्माओं में विश्वास रखना वाञ्छनीय है। उसके अनुसार ईश्वर सर्व शक्तिमान है। वही सबसे बड़ा आराध्य देव है। देवता और देवियाँ सभी उसके आधीन हैं। पुनर्जन्म में वह विश्वास करते थे। बलि, भविष्यवाणी और पूर्वजों की उपासना कनफ़्युशिश के अनुसार मनुष्य के कर्तव्य हैं। मैन्सिश और मेवज़ू भी इस धर्म के अनुयायी हैं।

अतएव प्रिय वत्स! तुम्हें इससे संसार के मुख्य-मुख्य धर्मों का ज्ञान होगया होगा। हमारा वैदिक धर्म अति प्रचीन है। उसमें समय के अनुसार कुछ शिथिलताएँ आगयी हैं। स्वामी-दयानन्द जी ने पर्याप्त सुधार किये हैं। जीवन को सुखी एवं शांत बनाने के लिए मनुष्य को धार्मिक जीवन व्यतीत करना अति आवश्यक है।

तुम्हारा शुभेच्छु

राम

———

तृतीय पत्र

प्रगतिशील मानव की दासी—बिजली

प्रिय उपमन्यु,

तुम जानते हो आज का मानव अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए निरन्तर परिश्रम तथा प्रयत्न कर रहा है। वह नित्य नयी वस्तुओं की खोज में है। इस कार्य के लिए उसे शक्ति की आवश्यकता है। कोयला, तेल और जल शक्ति के साधन हैं। कोयला और तेल सदैव पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल सकते हैं। इनके स्रोत अस्थायी हो सकते हैं। मनुष्य के दैनिक कार्यों के लिए ऐसे स्रोत की आवश्यकता है जो निरन्तर स्थायी हो। ऐसा स्रोत है जल। पृथ्वी के साथ जल भी स्थायी है। तुम जानते हो कि जल एक भारी पदार्थ है। एक घनफुट पानी का भार लगभग ६२·३२ पौण्ड होता है। इसलिए पानी का दबाव काफी होता है। जब पानी अधिक ऊँचाई से गिरता है, तो इसमें शक्ति होती है। इस शक्ति को बिजली की शक्ति में परिवर्तित कर लिया जाता है। इसी शक्ति से प्रकाश, ताप तथा अन्य प्रकार की शक्ति उत्पन्न की जाती है। तुम इस बात को जानने के उत्सुक होंगे कि पानी की शक्ति से बिजली की शक्ति कैसे बनायी जाती है। इस कार्य के लिए टरबाइन एञ्जिन का प्रयोग किया जाता है। टरबाइन एञ्जिन का सिद्धान्त अति सरल है। यदि हम एक लोहे का दाँतेदार चक्र लें और ऊँचाई से पानी की एक तेज धार दाँतों पर गिरने दें, तो चक्र घूमने लगेगा। फिर चक्र का सम्बन्ध एक लोहे के डंडे से करदें, तो वह लोहे का डंडा भी घूमने लगेगा। इसके पश्चात्

डायनमो द्वारा यह मशीन की शक्ति बिजली की शक्ति में बदली जा सकती है। एञ्जिनों की शक्ति घोड़ों की शक्ति के रूप में नापी जाती है। ३३००० पौण्ड भार को एक मिनट में एक फुट ऊँचा उठाने की एक घाड़े की शक्ति मानी जाती है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि हमारे भारतवर्ष में चार करोड़ घोड़ों की शक्ति की बिजली उत्पन्न की जा सकती है किन्तु अभी तक पाँच लाख घोड़ों की शक्ति की बिजली ही प्राप्त की गयी है। हमारी राष्ट्रीय सरकार अधिक उत्पादन के लिए प्रयत्नशील है।

प्रिय घत्स ! तुम्हारी समझ में बिजली के उत्पादन के विषय में आगया हागा। अब मैं तुम्हें यह बताऊँगा कि आज के प्रगतिशील मानव ने बिजली की शक्ति को कैसे दैनिक कार्य में उपयोगी बनाया है। सर्व प्रथम प्रयोग में आने वाली बिजली की उपयोगी वस्तुओं में बिजली की मोटर की गणना होती है। कार-खानों में घूमते हुए पहिये, जलयान, ट्रामकार, बिजली की रेल गाड़ियाँ, हटने वाले बड़ी-बड़ी नदियों के पुल, पंखे आदि सब बिजली की मोटर द्वारा ही चलते हैं। ये मोटर दो प्रकार के होते हैं। डी० सी० मोटर बिजली की सीधी धारा से चलते हैं। ए० सी० मोटर की धाराएँ निरन्तर बदलती रहती हैं। ए० सी० धारा डी० सी० धारा से अधिक शक्ति शाली होती है। रेडियो, पंखे आदि इन्हीं धाराओं के अनुसार बने होते हैं। एक धारा को दूसरी धारा में बदलने वाला एक विशेष प्रकार का यन्त्र भी होता है।

अमेरिका जैसे उन्नतशील देशों में कृषि के सारे कार्य बिजली की मोटर द्वारा किये जाते हैं। फसल काटने के यन्त्र, भूसा और अनाज पृथक पृथक करने के यन्त्र आदि बिजली के मोटर द्वारा ही कार्य करते हैं। हालैण्ड और बैलजियम जैसे देशों में गायें

एक-एक मन दूध देती हैं। वहाँ दूध बिजली के यन्त्र द्वारा ही दुहा जाता है। रबड़ के अस्तर लगे प्याले को थन के ऊपर लगा देते हैं। जिस प्रकार बछड़ा दूध पीते समय थनों को दबाता है और दूध खींचता है ठीक उसी प्रकार पम्प और वाल्वों के द्वारा बिजली का यन्त्र थनों से दूध निकालता है। यही नहीं बिजली के मोटर द्वारा क्रीम, मक्खन आदि भी बनाये जाते हैं।

बिजली द्वारा वृक्षों की वृद्धि भी हो सकती है। यह कार्य इलैक्ट्रोकल्चर से सींचने की विधि द्वारा सरलता से हो सकता है। सबसे पहले ५" चौड़ा तार का जाल वृक्ष के तने के चारों ओर इस प्रकार लपेट दिया जाता है कि वह वृक्ष की जड़ों का स्पर्श करता रहे। मेगनेटीय शक्ति को वृक्ष तक पहुँचाने के लिए इस तार का प्रयोग किया जाता है। साथ ही अगास्कर वैज्ञानिक द्वारा निकाले गये विद्युत के जल द्वारा वह वृक्ष सींचा जाता है। इस प्रकार की विधि से वृक्ष अधिक हरा-भरा भी रहता है और साथ ही फल भी अधिक बड़े-बड़े आते हैं। इसके अतिरिक्त वृक्ष इतना शक्ति शाली हो जाता है कि आँधी तथा कीड़े आदि वृक्ष को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सकते हैं विद्युत जल के सेवन से रोगी प्राणी भी स्वस्थ हो सकते हैं।

बिजली द्वारा द्रव का विश्लेषण बड़ी सरलता से हो जाता है। यदि किसी पात्र में कोई यौगिक द्रव रक्खा जाए। उसमें दो ध्रुव लगाकर विद्युत तार से लगा दिये जाएँ तो द्रव में विद्युत धारा प्रवाहित होने से द्रव्य पृथक-पृथक अवयवों में विभाजित होजाता है। इसी सिद्धान्त के द्वारा सोने चाँदी आदि का मुलम्मा किया जाता है। उदाहरण के लिए यदि हमें किसी चाँदी के पात्र पर सोने का मुलम्मा करना है, तो पात्र को सोने के घोल में ऋण विद्युद्वार पर लटका देंगे और सोने की एक शलाका को धन विद्युद्वार

पर लटका देंगे। विद्युत धारा के प्रवाह से सोने का पानी हो जायगा।

तुम देखते हो बिजली का उपयोग किस प्रकार बढ़ रहा है। आज बड़ी-बड़ी पुस्तकें तथा समाचार पत्र बिजली के द्वारा शीघ्र ही छापे जा सकते हैं। सर्व प्रथम टाइप मशीन की सहायता से साम के अक्षरों से साँचा बना लिया जाता है। उन पर ग्रेफाइट धातु का चूर्ण डाल दिया जाता है जिससे इस पर बिजली का चालक बन जाए। तदनन्तर यह साँचा ताँबे के घोल में टाँग दिया जाता है। अक्षरों के गड्ढों में ताँबाँ भर जाता है। ऊपर एक प्रकार की तश्तरी बन जाती है। इस प्रकार छापने के लिए टाइप बन जाता है। चित्रों के ब्लाक आदि इसी प्रकार बनाये जाते हैं। जिन स्थानों पर इस प्रकार के मुद्रणालय हैं उन्हें रोटरी प्रेस कहते हैं।

बिजली का चुम्बक भी एक महत्व पूर्ण आविष्कार है। वैज्ञानिकों ने खोज द्वारा यह मालूम किया है कि जिस तार में बिजली की धारा प्रवाहित होती है, वह चुम्बक के गुण भी प्राप्त कर लेता है। भारी-भारी लोहे के लट्ठों आदि को उठाने के लिए विद्युत एवं चुम्बक के उठाने के यंत्र काम में लाये जाते हैं। जिन्हें क्रेन कहते हैं। विद्युत के चुम्बक से लोहे के बुरादे तथा छोटे छोटे टुकड़ों को सरलता से पृथक किया जा सकता है। शरीर के किसी अंग में यदि कोई लोहे का टुकड़ा लग जाए तो वह विद्युत की चुम्बक शक्ति से सरलता से निकल सकता है। बिजली की घंटी बिजली के चुम्बक की सहायता से ही कार्य करती है। विद्युत धार की सहायता से लोहे के टुकड़े में चुम्बक शक्ति उत्पन्न हो जाती है। हथौड़ा लगी हुई लोहे की छड़ उस लोहे के टुकड़े की ओर आकर्षित करती है। हथौड़ा घंटी में चोट देता है जिससे ध्वनि उत्पन्न होती है। हथौड़ा के पृथक होने से विद्युत का चक्र टूट

जाता है। तब विद्युत की धारा बन्द होने के कारण लोहे के टुकड़े में चुम्बक का गुण नहीं रहता है। हथौड़ा कमानी के लौटने से पीछे हट जाता है। चक्र पूर्ण होने पर लोहा फिर चुम्बक शक्ति को ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार बटन दबने पर बिजली की घंटी बजने लगती है। विद्युत घंटी का सिद्धान्त लेकर चोर घंटी का निर्माण किया गया है। जैसे ही कोई चोर दरवाजा खोलता है, चोर घंटी बजने लगती है और घर में सोने वाले घंटी की ध्वनि सुनते ही जग पड़ते हैं।

प्रिय वत्स, उपयुक्ति विधि तुम्हारी समझ में आगयी होगी। तुम रोजाना अपने कमरे में बैठे रेडियो सुनते हो। दूर-दूर के गाने, भाषण, कविता आदि बटन दबाते ही सुनने लगते हो। इसका श्रेय बिजली को ही है। अब टेलीविज़न द्वारा मनुष्यों की ध्वनि ही नहीं अपितु चित्र भी भेजे जाने लगे हैं। इस यंत्र के द्वारा कविता कहने वाला, भाषण देने वाला तथा गाने वाले का चित्र तुम्हारे नेत्रों के सामने उपस्थित हो जाएगा। अतएव टेलीविज़न के यन्त्र द्वारा हम सिनेमा की भाँति चित्र भी देख सकते है। इस यन्त्र द्वारा मनुष्य के विम्ब को विद्युतकणों की धाराओं में बदल दिया जाता है और रिसीवर उनको वापिस विम्ब में बदल देता है। जिस पदार्थ को भेजना हो उस पर गहरे प्रकाश की धारा डाली जाती है। वह पदार्थ प्रकाशित होकर अपनी किरणों को लौटाकर फोटो इलेक्ट्रिक्ट सैलों पर डालता है। फिर बेतार की विधि द्वारा चित्र दिखाई देने लगते हैं। इसी प्रकार फेक सिमिली के यन्त्र द्वारा हम संसार के दूर से दूर देश के समाचार घर पर बैठे पढ़ सकते हैं। यह यन्त्र समाचार और चित्र छाप कर देता है। भेजे जाने वाले चित्र और समाचार एक यन्त्र में लगाये जाते हैं। उन पर प्रकाश फेंका जाता है। शेष कार्य रेडिओ तथा टेलीविज़न के

सिद्धान्त पर ही होता है। अमरीका में इस यन्त्र का काफी प्रचार है। आशा की जाती है कि हमारे देश में भी इसका प्रचार शीघ्र ही हो जाएगा।

प्रिय उपमन्यु, टेलीफोन पर तो तुमने बातें कई बार की हैं। पोस्ट अफिस तथा तारघर में गट गर गट की ध्वनि द्वारा समाचार भेजते हुए भी तुमने तार बाबू को देखा है। ये ध्वनियाँ बिजली की लहरों में परिणित होजाती हैं और रिसीवर द्वारा ये ध्वनियाँ फिर अपनी असली ध्वनियों में बदल जाती हैं। आज बिजली द्वारा हम दूर बैठे अपने मित्रों बान्धवों तथा सम्बन्धियों से बात-चीत कर सकते हैं तथा अपना समाचार भेज सकते हैं। ये कार्य तुरन्त ही होजाते हैं। इस प्रकार बिजली ने मनुष्य के जीवन को अधिक सुखमय बना दिया है।

इस छोटे से पत्र में बिजली की शक्ति के विषय में पूर्णरूप से लिखना नितान्त असम्भव है। ऊपर तुम पढ़ोगे कि बिजली ने कैसे आश्चर्य के काम कर दिखाये हैं। वह आज के प्रगतिशील मानव की दासी है। मानव अपनी इच्छानुकूल बिजली की शक्ति का प्रयोग चाहे जिस कार्य के लिए कर सकता है। फिर भी मानव को संतोष नहीं है। बिजली द्वारा बनावटी बादलों से पानी बरसाना, कमरे का तापक्रम समान रखना, झाड़ू लगवाना, कपड़े धुलवाना, स्त्री करवाना, घूमने वाली सीढ़ियाँ, ध्वनिप्रसारक यन्त्र आदि ने मनुष्य के जीवन को अत्यन्त सुखमय बना दिया है।

सारांश यह है कि आज छोटे से छोटे कार्य बिजली द्वारा ही किये जाते हैं। प्रातःकाल बिजली द्वारा ही घड़ी का अलार्म निंद्रा भंग करता है। तदनन्तर बिजली के चूल्हे पर ही चाय बन जाती है। उसी पर खाना बन जाता है। पहनने के वस्त्र बिजली की

शक्ति से ही कारखानों में बने हैं। बिजली की ट्रामगाड़ी द्वारा ही तुम विद्यालय पहुँच जाते हो। बिजली के प्रकाश में ही रात को पढ़ते हो, रेडियो सुनते हो। कहने का तात्पर्य यह है कि आज के मनुष्य को बिजली पग-पग पर सहायता करती है। एक क्षण के लिए रात को बिजली चली जाती है, तो हम पंगु से होजाते हैं। गर्मी के दिनों में गरमी से व्याकुल हो जाते हैं। आज के युग की उन्नति बिजली की उन्नति पर ही अवलम्बित है। प्रगतिशील मानव की दासी, बिजली ही दूसरे शब्दों में आज की उन्नति का प्रतीक है।

तुम्हारा शुभेच्छु

राम

चतुर्थ पत्र

देश निर्माता

प्रिय उपमन्यु

इस पत्र में मेरा विचार विश्व के कतिपय ऐसे महान पुरुषों के जीवन तथा कार्यों का उल्लेख करना है जिन्होंने अपने साहस एवं त्याग द्वारा अपने देश का उत्थान किया। आज के युग का सबसे बड़ा मानव धर्म है देशभक्ति। किसी कवि ने ठीक ही कहा है:—

'जो भरा नहीं है भावों से,
जिसमें बहती रस धार नहीं।
वह हृदय नहीं, वह पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं॥

अतएव प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वह तन मन धन से अपने देश की उन्नति करे। प्रिय वत्स, तुमको आगे मैं ऐसे ही कुछ देशभक्तों का परिचय कराऊँगा जिन्होंने अपनी मातृभूमि की उन्नति कर एक नये युग का निर्माण किया।

हमारे भारतवर्ष में नया युग लाने वाले पूज्य महात्मा गाँधी ही कहे जाएँगे। उन्होंने ही शताब्दियों से परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े हुए भारत को मुक्त किया। भारत-त्राता, शान्ति के अवतार, अहिंसा के उपासक, प्रातः स्मरणीय महात्मा गाँधी का पूरा नाम 'मोहनदास कर्मचन्द गाँधी' था। उनका जन्म काठियाबाढ़ अन्तर्गत पोरबन्दर में २ अक्टूबर सन् १८६९ ईसाब्द को हुआ था। आपके पिता राजकोट राज्य में दीवान थे। आरम्भिक शिक्षा दीक्षा आपकी वहीं हुई। सन्१८८८ ईसवी में आप मैट्रिक पास कर विलायत गये। वहाँ से ही बैरिस्ट्री की परीक्षा पास की।

भारत लौटने पर आपने वकालत करना आरम्भ किया किन्तु देश-प्रेम की ज्वाला ने आपको राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश कराया। आपने अपने देश के उत्थान का बीड़ा उठाया। भारतीयों को एक सूत्र में बाँधकर सरकार के विरुद्ध आपने असहयोग आन्दोलन किये। सर्व प्रथम आपका राजनीतिक क्षेत्र अफ्रीका रहा। वहाँ आपने भारतीयों में जाग्रति उत्पन्न की। तदनन्तर आपने भारतीय क्षेत्र अपनाया। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होते ही गाँधी जी ने असहयोग आन्दोलन छेड़ दिया। गाँधी जी जेल में डाल दिये गये। सन् १९३० ई० में गाँधी जी ने नमक का कानून तोड़ने के लिए दण्डी की यात्रा की। असहयोग आन्दोलन की पुनरावृति भी की गयी। 'विदेशी वस्तुओं के वहिष्कार' का आन्दोलन भी हुआ। मार्च १९३१ में गाँधी इरविन समझौता भी हुआ किन्तु सरकार ने मागें पूरी न कीं। १९३२ ई० में गोल मेज परिषद इङ्गलैण्ड में हुई किन्तु ब्रिटिश सरकार ने भारतीय माँगों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। फिर आन्दोलन हुए। फलतः गाँधी जी को जेल में डाल दिया। जेल में ही गाँधी जी ने हरिजनोत्थान के लिए अनशन किया। आप शीघ्र ही मुक्त हुए। सन् १९३७ ई० में गाँधी जी के प्रयत्न से देश में निर्वाचन हुए। काँग्रेस लगभग - प्रान्तों में विजयी रही। तदनन्तर महायुद्ध छिड़ा। वाइसराय ने बिना नेता लोगों के परामर्श के भारत को मित्र राष्ट्रों के विरुद्ध युद्ध में सम्मिलित कर दिया। सरकार की इस कूटनीति के कारण काँग्रेस के सभी मन्त्रिमण्डलों ने त्यागपत्र दे दिया। अन्त में बम्बई के अधिवेशन में महात्मा गाँधी जी ने 'अंगरेजो भारत छोड़ो' का नारा उठाया। सभी काँग्रेसी कार्य कर्त्ता जेलों में डाल दिये गये। ९ अगस्त सन् १९४२ को इसके विरोध में देश में क्रान्ति हुई। सरकार को पलटने के प्रयत्न किये गये। इस क्रांति से ब्रिटिश सरकार के पैर काँपने लगे। १९४४ ई० में सभी जेलों से

मुक्त कर दिये गये। १९४५ ई० में शिमिला सम्मेलन हुआ। अन्त में पूज्य गाँधी जी के प्रयत्न से १५ अगस्त १९४७ ई० को भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। साम्प्रदायिक दंगों को शान्त करने का गाँधी जी ने भरसक प्रयत्न किया। उनकी दृष्टि में हिन्दू, मुसलिम, ईसाई आदि समान ही थे। इसी द्वेश से क्रूर नाथूराम गौडसे ने पिस्तौल द्वारा गाँधी जी की जीवन लीला को समाप्त कर दिया। आप अपनी सेवाओं के फलस्वरूप बापू कहलाये। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास महात्मा गाँधी जी का इतहास है। आपका नाम विश्व के इतिहास में सदैव अमर रहेगा।

इसी प्रकार टर्की के निर्माता 'मुस्तफा कमालपाशा' कहे जाएँगे। इनका जन्म सन् १८७८ ई० में सेलोनिका नगर में हुआ था। कमाल के पिता पहले चुङ्गी में कर्ल्क थे। तदनन्तर उन्होंने लकड़ी की दूकान खोली। इस प्रकार कमाल का जन्म अत्यन्त दीन परिवार में हुआ। अभाग्य वश बचपन में ही कमाल के पिता का देहावसान होगया। अतः शिक्षा दीक्षा का भार माता पर हो आगया। प्रारम्भ में कमाल को अरबी पढ़ाई गयी किन्तु कमाल अरबी स्कूल को छोड़कर एक सैनिक स्कूल में चले गये। कमाल गणित में अत्यन्त तेज थे। वहाँ से परीक्षा पास करने के पश्चात् कमाल कुस्तुन्तुनियाँ के सैनिक कालेज में गये। वहाँ से निकलने पर सन् १९०५ ई० में वह सेना में कप्तान होगये। राजनीति में कमाल की प्रारम्भ से ही रुचि थी। टर्की का सुलतान अब्दुल हमीद निकम्मा शासक था। कमाल को अपने देश की कमजोर सरकार से घृणा थी। इसलिए देशोन्नति करने के उद्देश्य से वह गुप्तरूप से वतन नामक संस्था का सदस्य हो गया। सरकार को इस बात का पता चल गया। अतः कमाल को अन्यत्र सैनिक रिसाले में भेज दिया गया। कमाल फिर सेलोनिका लौट आया। यहाँ

उसने 'एकता और सुधार' नाम की संस्था में सदस्यता प्राप्त करली। सुलतान को इस संस्था के आगे झुकना पड़ा किन्तु कमाल को विशेष लाभ नहीं हुआ। १६११ ई० में कमाल को इटैली के विरुद्ध युद्ध करने के लिए ट्रिपालीटाना भेजा गया। अपनी वीरता के कारण वह मेजर हो गया। सन् १६१३ ई० के बल्कान युद्ध में कमाल सेनापति होगया। दानियल दर्रे के प्रश्न को कमाल ने सरलता से सुलझा दिया। संधि होने पर कमाल को सोफिया का फौजी अफसर बना दिया गया। अनवर पाशा से अनबन होने के कारण कमाल का उच्च पद नहीं मिला। कमाल युद्ध में रुचि लेता रहा। ब्रिटिश सेनाएँ सफलता प्राप्त न कर सकीं। रूस से विटलिस और मूश कमाल ने वापिस ले लिये।

सन् १६१७ में कमाल हजाज भेज दिया गया। कमाल ने जब विदेशी राष्ट्रों को अपने देश की राजनीति में हस्तक्षेप करते देखा तो उससे सहन न हो सका। उसने सैनिक नौकरी से त्याग-पत्र देदिया। वहीउद्दीन के सुल्तान होने पर कमाल ने फिर सेना में नौकरी करली। किन्तु कमाल उससे भी संतुष्ट नहीं रहा। अन्त में कमाल ने राष्ट्रीय सेना का संगठन किया। कमाल को सफलता मिली। सन् १६१६ ई० में वह यूनान सम्राज्य को पराजित कर इटली का एकमात्र निरंकुश स्वामी बन गया। इस प्रकार टर्की में प्रजातन्त्र राज्य की स्थापना हुई। कमाल इसका प्रथम राष्ट्रपति हुआ। उसने रोगी टर्की की काया ही पलट दी। उसने टर्की में सामाजिक क्रांति करदी। धर्म की प्रधानता को दूर किया। यूरोपीय कानून टर्की में चलाये। तुर्की स्त्रियों का पर्दा दूर किया। राष्ट्रीय शिक्षा अनिवार्य करदी। उन्नत टर्की का श्रेय मुस्तफा कमाल पाशा को ही है।

प्रिय उपमन्यु, तुम देखते हो कि आज रूस की गणना उन्नत-शील देशों में है। रूस की इस उन्नति का श्रेय लेनिन को ही है।

उनका पूरा नाम व्लाडीमीर इलियच उल्यानोव लेनिन था। इनका जन्म सन् १८७० ई० में हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा दीक्षा सिम्ब्रिस्क स्कूल में हुई। वहाँ की अन्तिम परीक्षा में सन् १८८७ ई० में प्रथम स्थान पाया और पुरस्कार में एक स्वर्ण पदक प्राप्त किया। तदनन्तर लेनिन ने कानून की शिक्षा प्राप्त करने के लिए कज़ान विश्व विद्यालय में प्रवेश किया लेनिन को प्रारम्भ से ही पूँजीपतियों से घृणा थी। अतः लेनिन ने विद्यार्थियों की एक सभा में भाषण दिया। विश्व विद्यालय के अधिकारियों ने लेनिन को निकाल दिया। तदनन्तर लेनिन ने सेन्टपीटर्स के विश्व विद्यालय से वकालत की परीक्षा पास की। समारा की अदालत में वकालत की किन्तु लेनिन की राजनीति में अधिक रुचि थी। उसने सन १६६५ ई० में सेण्ट पीटर्स में एक मज़दूरों का संघ स्थापित किया। यह संस्था शीघ्र ही प्रभावशाली हो गयी। इस पर लेनिन और उसके साथियों को सरकार द्वारा जेल भेज दिया गया। एक वर्ष जेल में रहने के उपरान्त देश निकाला देकर साइबेरिया जैसे शीत प्रधान देश में तीन वर्ष तक रहने का दण्ड दिया गया। इसी समय में लेनिन ने 'रूस के पूँजीवाद का विकास' नामक ग्रन्थ लिखा। सन् १८६८ ई० में सेन्ट पीटर्स वर्ग की संस्था की सहयोगिनी क्रुप्सकाया से विवाह कर लिया। १६००ई० में लेनिन ने इस्क्रा नामक साम्यवादी पत्र प्रकाशित किया। सन १६०३ ई० में ब्रूसेल्स में साम्यवादियों की सभा हुई। उसमें लेनिन का कार्यक्रम स्वीकार कर लिया गया पहले साम्यवादियों के गरम और नरम दो दल हो गये किन्तु सन १६१४ ई० में दोनों दल लेनिन के प्रयत्न से एक होगये। सन् १६०५ ई० में रूस और जापान की लड़ाई से रूस देश में क्रान्ति के लक्षण दिखाई देने लग। छोटे विद्रोह होते रहे। जागीरदारों के विरुद्ध किसानों की भावनाएँ जाग्रत हुईं। लेनिन का अधिकतर समय देश से बाहर ही व्यतीत हुआ क्योंकि वह रूस की पूँजी-

पति-सरकार से सशंकित था। उसका कार्य मज़दूर और किसान वर्ग को पूँजीपतियों के विरुद्ध भड़काना था। अन्त में १६१७ ई० में लेनिन फिर सेण्ट पीटर्स वर्ग पहुँचा। उसने वहाँ जाकर भाषण दिया कि ज़ारशाही का पतन केवल क्रान्ति द्वारा ही सम्भव है।

रूस का सम्राट ज़ार गद्दी से उतार दिया गया। क्षणिक सरकार बनी किन्तु उसमें मध्यम श्रेणी के लोग थे। ये सभी लेनिन के सिद्धान्तों के विरोधी थे। फलतः रूस में गृह कलह और बाहरी आक्रमणों से अशान्ति फैल गयी। लेनिन ने पंच वर्षीय योजना तैयार की। उसके अनुसार किसान और साधारण सैनिकों ने जागीरदारों से भूमि छीनकर अपने अधिकार में करली। साम्यवादियों ने मास्को में अपनी राजधानी बनायी। इस प्रकार संसार में एक नये सिद्धान्त का श्रीगणेश हुआ। अब धीरे धीरे साम्यवादी लोग संसार में बढ़ रहे हैं। इस प्रकार रूस में नये युग के लाने वाले लेनिन ही कहे जायँगे। सन् १६२४ ई० में उनकी मृत्यु पर रूस जनता ने अपार शोक प्रकट किया।

प्रिय वत्स! विश्व के इतिहास में ऐसे देशभक्तों के नाम भरे पड़े हैं। ईरान की गणना भी आज के उन्नतशील देशों में होती है। इसकी उन्नति का श्रेय रिज़ाशाह को है। रिज़ाशाह का जन्म एक गरीब किसान के यहाँ सन् १८७७ ई० में कोह सवद में हुआ था रिज़ाखाँ ने प्रारम्भ से ही सेना में नौकरी करली। धीरे-धीरे वह कज़ाकी सेना का अफसर होगया जो रूस से लड़ने गयी थी। यद्यपि उस समय ईरानी सेना हार गयी किन्तु रिजाखाँ ने साहस नहीं छोड़ा। उसे देश में ज्यादा अँगरेजी सेना से चिढ़ थी। कुछ काल पश्चात् रिज़ाखाँ को सफलता मिली। सन् १६२१ ई० में वह ईरानी सेना का प्रधान मंत्री तथा युद्ध मन्त्री बन गया। शासन की बागडोर रिज़ाखाँ के हाथ में ही आगयी। शाह तो केवल नाममात्र

का शासक रह गया। रिज़ाखाँ युद्ध मन्त्री भी होगया। उसके सभी प्रस्ताव समिति द्वारा पास कर दिये गये। रिज़ाखाँ ने ईरान को आर्थिक दशा को सुधारने के लिए सभी कार्य किये। शाह सुल्तान अहमत को रिज़ाखाँ की शक्ति पर अत्यन्त क्षोभ हुआ किन्तु वह असमर्थ था। अन्त में वह सन् १६२५ ई० में योरोप चला गया। इधर ईरानी परिषद ने रिज़ाखाँ को सर्वेसर्वा बना दिया। तदनन्तर रिज़ाखाँ, रिज़ाशाह पहलवी के नाम से बादशाह बना। इसी समय नया विधान बना। तेहरान शहर में १६२६ ई० में रिज़ाशाह को राजमुकुट पहनाया गया। रिज़ाशाह ने ईरान में अनेक सुधार किये। शिक्षा का प्रचार बढ़ाया। सैनिक शक्ति को संगठित किया राष्ट्र भाषा को प्रमुखता दी। कहने का तात्पर्य यह है कि आज का उन्नत ईरान रिजाशाह के प्रयत्न का फल है।

इसी प्रकार आयरलैण्ड के निर्माता 'डि वेलरा' कहे जायँगे। डि वेलरा का जन्म न्यूयार्क शहर में सन् १८८२ ई० में हुआ था। उसके पिता स्पेन वासी और माता आयरिश थी। डि वेलरा की शिक्षा दीक्षा आयरलैण्ड में ही हुई। सन् १६१३ ई० में डि वेलरा आयरिश स्वयं सेवक नामक संस्था का स्वयं सेवक होगया।

सन् १६१६ ई० में डि वेलरा ने ब्रिटिश शासकों का विरोध करने का विद्रोह किया। डि वेलरा को मृत्यु दण्ड मिला किन्तु बाद को यह सजा आजन्म कारावास में परिणित होगयी। सन् १६१७ को सभी कैदियों के साथ वह जेल से मुक्त होगया। छूटते ही डि वैलरा ने प्रजातन्त्र सेना का संगठन किया। तदनन्तर वेस्ट मिनिस्टर पार्लियामैण्ट का सदस्य चुन लिया गया। सन् १६१८ के विद्रोह में डि वेलरा गिरफ्तार कर लिया गया। इस बार वह लिंकन जेल में रक्खा गया। जेल से भागने की कहानी बड़ी रोचक है। डि वैलरा पर जेल में कड़ा नियन्त्रण रक्खा गया। कोई भी व्यक्ति

उससे मिल नहीं सकता था। उस समय केवल कैदियों को अपने मित्रों को व्यङ्ग चित्र भेजने की छूट थी। डि वैलरा ने जेल के दरवाजे की ताली की छाप मोमबत्ती पर लेली। उसने एक कार्ड पर व्यंग चित्र बनवाकर भेजा। उसमें एक शराबी द्वार के ताले में ताली लगा रहा था। चित्र के नीचे लिखा था 'मैं अन्दर नहीं जा सकता' दूसरे चित्र में एक मनुष्य जेल के ताले में चाबी लगा रहा था। उस पर लिखा था 'मैं बाहर नहीं जा सकता'। वास्तव में यह असली चाबियों के चित्र थे। ब्रिटिश अफसर इन चित्रों के भाव को न समझ सके। डि वैलरा के मित्र चित्रों के अर्थ को समझ गये। उन्होंने तुरन्त एक चाबी बनाकर रोटी में पकने से पहले रख कर भेज दी। इस प्रकार चाबी डि वैलरा के पास पहुँच गयी। डि वैलरा चाबी की सहायता से जेल से भाग निकला और अमेरिका पहुँचा। वहाँ उसने प्रजातन्त्र के आन्दोलन के लिए धन एकत्रित किया। आयरलैण्ड के निवासियों ने हिंसात्मक आन्दोलन किया। १६२१ ई० में दोनों देशों में सन्धि हुई। किन्तु डि वैलरा उन शर्तों से सन्तुष्ट नही हुए। अन्त में १६२३ ई० में वह फिर पकड़ लिये गये। अन्त में मुक्त होने के बाद वेलरा ने फियना फेल नाम का एक नया दल स्थापित किया। अन्त में डि वैलरा का आयरलैंड की स्वतन्त्रता प्राप्ति में सफलता मिली। उन्नत आयरलैंड के निर्माता डि वेलरा ही कहे जायँगे।

प्रिय वत्स, अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि एक पराधीन देश को मुक्त करने तथा देश की अवस्था सुधारने में देशभक्तों को कितना काम करना पड़ता है। अरब के निर्माता इब्न सऊद, इटली के वेनिटो मुसोलनी, जर्मनी के एडोल्फ हिटलर, पोलैण्ड के पिल्सुड्स्की, जैकोस्लोवेकिया के मसारिक, अमेरिका के इब्राहम लिनकन और वाशिंगटन, चीन के सनयाटसेन, इण्डोनेशिया के सुकार्णो आदि देश निर्माता ही कहे जाएँगे।

उपर्युक्त महापुरुषों के मातृभूमि के लिए किये गये कार्य विश्व इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं। यदि गम्भीरतया विचार किया जाय तो हमारा पावन कर्तव्य है कि तन मन धन से जन्मभूमि के दुःखों को दूर करें। किसी ने ठीक ही कहा है:—

'जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं है, पशु निरा और मृतक समान है॥'

तुम्हारा शुभेच्छु
राम

पञ्चम पत्र

मुसलमान कवि और हिन्दी-सेवा

प्रिय उपमन्यु,

तुमने पिछले पत्र में रसखान कवि को मुसलमान होने में सन्देह किया है। यह सत्य हो सकता है कि रसखान कवि मुसलमान न हों किन्तु तुम्हारा यह कहना कि मुसलमान हिन्दी में ऐसी सुन्दर कविता नहीं कर सकते, युक्त नहीं। हिन्दी साहित्य के इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालने से विदित होता है कि अनेक मुसलमान कवियों ने हिन्दी में सुन्दर रचनाएँ की हैं। जायसी की पद्मावत हिन्दी साहित्य की अमर निधि है। इस पत्र में मेरा विचार तुम्हें हिन्दी की सेवा करने वाले मुसलमान कवियों के विषय में ज्ञान कराना है। रसखान के विषय में भी आगे कुछ उल्लेख करूँगा।

उपमन्यु देखो हमारी हिन्दी भाषा अत्यन्त मधुर और सरस है। चाहे कट्टर से कट्टर विधर्मी क्यों न हो, उसे हमारी हिन्दी भाषा का माधुर्य्य स्वीकार करना पड़ेगा। कहा जाता है कि जल की गागर सिर पर रक्खे किसी ब्रजरमणी के पीछे रोती हुई बालिका के मुख से 'साँकरी गली में काँकरी छिदत है' सुनकर फारसी भाषा के महारथी कवि अमीर खुसरो का अभिमान दूर होगया था। औरङ्गजेब के पुत्र आजमशाह के दरबार में हिन्दी साहित्य के प्रेमी भरे ही रहते थे। अकबर के दरबार में भी हिन्दी कवियों का अभाव नहीं था। मैं तुमको मुसलमान कवियों का परिचय क्रमवार ही कराऊँगा।

हमें सर्व प्रथम हिन्दी भाषा में खड़ी बोली की झाँकी अमीर खुसरो की कविता में मिलती है। अमीर खुसरो पहले फारसी भाषा में कविता करते थे। हिन्दी के माधुर्य के कारण खुसरो ने हिन्दी में कविता करना आरम्भ किया। आचार्य रामचन्द शुक्ल के मतानुसार अमीर खुसरो का कविताकाल संवत् १३४० विक्रमी के लगभग माना जाता है। कतिपय महानुभावों के अनुसार अमीर खुसरो एटा जिलान्तर्गत पटियाली नामक ग्राम में उत्पन्न हुए थे। खुसरो अत्यन्त सरस हृदय के विनोदी एवं भावुक कवि थे। साधारण जनता में आज भी खुसरो की पहेलियाँ प्रचलित हैं। स्वाभाविकता तथा उक्ति वैचित्र्य के कारण उनमें एक अलौकिक आकर्षण है जो हमको मन्त्र मुग्ध किये बिना नहीं रहता। देखिए:—

एक थाल मोती से भरा।
सबके सिर पर औंधा धरा॥
चारों ओर वह थाली फिरे।
मोती उससे एक न गिरे॥

—आकाश

बीसों का सर काट लिया, ना मारा ना खून किया।
अति सुन्दर जग चाहे जाको, मैं भी देख भुलानी वाको।

देख रूप आया जो टोना।
ए सखि साजन, न सखि सोना।

अमीर खुसरो अत्यन्त प्रत्युत्पन्नमति के कवि थे। यह जानकर तुमको आश्चर्य होगा कि वह चलते चलते कविता बना लेते थे। कहा जाता है कि खुसरो जल पीने के लिए एक कुएँ पर गये जहाँ कुछ स्त्रियाँ जल भर रही थीं। खुसरो के जल माँगने पर स्त्रियों ने पहिले कविता सुनाने के लिए कहा। तुरन्त ही

चार स्त्रियों ने अपने विषय खीर, चरखा, कुत्ता, ढोल आदि दे दिये। खुसरो ने शीघ्र ही कविता बना डाली।

'खीर पकाई जतन सों, चरखा दिया चलाय।
आया कुत्ता खागया, तू बैठी ढोल बजाय॥'
—ला पानी पिलादे!

अमीर खुसरो के पश्चात् ज्ञानाश्रयी शाखा के सर्वोच्च कवि महात्मा कबीर का नाम उल्लेखनीय है। कबीर कसौटी के अनुसार कबीरदास जी का जन्म संवत् १४५६ विक्रमी के लगभग हुआ था। जन्म इनका चाहे जिस जाति में हुआ हो किन्तु पालन पोषण मुसलमान जुलाहे के घर में हुआ। इन्होंने मुसलमान फकीरों की संगति की थी। इसका कबीरदास जी ने स्वयं उल्लेख किया है:—

'मानिक पुराहि कबीर वसेरी।
मद हति सुनी सेख ताके केरी।
ऊजी सुनी जौनपुर थाना।
भूसी सुनि पीरन के नामा।'

इतना होते हुए भी कबीरदास जी ने अपने उपदेशों के लिए हिन्दी भाषा को ही उपयुक्त समझा। इसका उन पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा। वह स्वामी रामानन्द के शिष्य हो गये। देखिए:—

'काशी में हम प्रगट भये, रामानन्द चेताये।'

कबीरदास जी ने हिन्दू मुसलिम एकता पर जोर दिया। उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों के आडम्बरों की कटु आलोचना कर धर्म का सच्चा और सोधा मार्ग बताया। देखिए:—

'अरे इन दोउन राह न पाई।
हिन्दू अपनी करै बड़ाई गागर छुवन न देई।
वैश्या के पायन तर सोवैं, यह देखो हिन्दुवाई।

मुसलमान और पीर औलिया मुरगी मुरगा खाई।
खाला केरी बेटी ब्याहै, घराई में करै सगाई।'

मुसलमानों को उन्होंने कैसा फटकारा:—

'बकरी पाती खाति है ताकी काढ़ी खाल।
जो नर बकरी खात है तिनकों कौन हवाल॥'

'मसजिद भीतर मुल्ला पुकारै, क्या साहिब तेरा बहिरा है।'
'भूँठा रोजा, भूँठी ईद'

कहने का तात्पर्य यह है कि कबीरदास जी का हिन्दी साहित्य में एक प्रमुख स्थान है। उन्होंने निर्गुण वाणी का प्रचार किया। भारतीय ब्रह्मवाद तथा वैष्णवों के, अहिंसावाद की छाप उनके साहित्य पर पूर्ण रूप से है। माया, जीव, ब्रह्म, तत्वमसि, त्रिकुटी, छः रिपु आदि का उल्लेख उन्होंने हिन्दू महात्माओं की संगति से ही किया है। भावात्मक रहस्यवाद का ऐसा सुन्दर निरूपण अन्यत्र देखने को नहीं मिलेगा। सारांश यह है कि कबीरदास जी हिन्दी साहित्य के अमर रत्न है।

कबीर जी के पश्चात् प्रेमाश्रयी शाखा के सभी कवि मुसलमान हैं। उन्होंने हिन्दू घरानों की कहानियाँ एवं कथाएँ लेकर अवधी भाषा में कविता की अलौकिक प्रतिभा का भूरि-भूरि परिचय दिया है। कुतवन, मंझन, जायसी, उसमान, कासिम, नूरमुहम्मद, फाजिलशाह आदि सूफी कवियों ने हिन्दी साहित्य का कलेवर पर्याप्त मात्रा में बढ़ाया। तुलसीदासजी ने इन्हीं कवियों की दोहा चौपाई की शैली का अनुकरण रामचरित मानस में किया है। सूफी कवियों के प्रसिद्ध ग्रंथ मृगावती, मधुमालती, पद्मावत, अखरावट, चित्रावली, ज्ञानदीप, हंस जवाहिर, इन्द्रावती आदि हैं। मलिक मुहम्मद जायसी जी की पद्मावत की गणना तो हिन्दी के श्रेष्ठ ग्रन्थों में होती है। सूफी कवि नूरमुहम्मद ने हिन्दी की ओर आकर्षित होने को कैसा लिखा है। देखिए :—

'कामयाव कह कौन जगावा। फिर हिन्दी भाषै पर आवा॥
छाँड़ फारसी कंद नवातें। अरुझाना हिन्दी रस बातें॥'

सूफी कवियों ने हिन्दी साहित्य प्रेम का मधुर एवं सुन्दर निरूपण किया है। प्रेम और अध्यात्मवाद का समन्वय अति सुन्दर है। जायसी के प्रेम को देखिए :—

'तन चितउर, मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा॥
गुरू सुआ जिहि पंथ देखावा। बिन गुरु जगत को निरगुन पावा॥
नागमती यह दुनिया धन्धा। बाँचा सोइ न एहि चित वन्धा॥
राघव दूत सोई सैतानू। माया अलाउद्दीन सुलतानू॥

जायसी द्वारा चित्रित वियोग वर्णन हिन्दी साहित्य में दुर्लभ है। नागमती का वारहमास का वियोग वर्णन उत्कृष्ट काव्य का अलौकिक उदाहरण है। प्रीति के लिए सन्देश प्रेषित करने की अन्तिम अभिलाषा देखिए:—

'पिय से कहो संदेसड़ा हे भौंरा! हे काग।
सो धनि विरहनि जरि मुई तेहिक धुआँ हम लाग॥'

कहने का साराँश यह है कि हिन्दी साहित्य में सूफी काव्य का महत्वपूर्ण स्थान है। यदि भक्ति काल में से प्रेमाश्रयी शाखा के साहित्य को निकाल दीजिए तो भक्तिकाल साहित्य अपूर्ण ही रह जाता है।

उपर्युक्त कवियों के पश्चात् रसखान का नाम उल्लेखनीय है तुम जानते हो हमारे हिन्दू धर्म में प्रेमी और सरस हृदयों के लिए श्रीकृष्ण जी का आकर्षक और माधुर्यपूर्ण चरित्र है। रसखान कवि इसी सौन्दर्य से मुग्ध होकर पठान से कृष्ण भक्त हो गये थे। उन्होंने अपनी लिखी 'प्रेम वाटिका' में अपने को शाही खानदान का लिखा है। जैसा कि निम्नलिखित पंक्तियों से प्रकट होता है!

'देखि गदरहित साहिवी दिल्ली नगर मसान।
छिनहिं बादसा-वंस की ठसक छाँड़ि रसखान॥

इनका कविता काल संवत् १६१५ विक्रमी से १६८५ विक्रमी तक माना जाता है। ब्रजभाषा, ब्रजराज तथा ब्रज-छवि के अनुपम आकर्षण ने हिन्दी साहित्य की ओर आकर्षित किया। यह भावुक और प्रेमी कवि थे। इनके रचे कवित्त और सवैयों हृदय पूर्णरूप से स्पर्श करते हैं। स्वर्गीय आचार्य रामचन्द्रजी शुक्ल ने रसखान के विषय में पर्याप्त कहा है :—

'शुद्ध ब्रजभाषा का जो चलतापन और सफाई रसखान और घनानन्द की रचनाओं में है, वह अन्यत्र दुर्लभ हैं तथा अनुप्रास की सुन्दर छटा होते हुए भी भाषा की चुस्ती और सफाई कहीं नहीं जाने पाई है। देखिए ;—

'मानुष हौं तो वही रसखान बसों ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बरु मेरों चरौं नित नन्द की धेनु मंझारन।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो धरयौ कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हों तो बसेरों करौं मिलि कालिन्दी कूल कदम्ब की डारनि।

और देखिए :—

'या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँपुर को तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द की गाय चराय बिसारौं।
नैनन सों रसखान जबै ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं।
केतिक ही कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं।

इस प्रकार हम देखते हैं रसखान भी हिन्दी जगत के प्रमुख कवियों में हैं। कृष्ण के उपासक थे।

तदनन्तर मुसलमान कवि अब्दुलरहीम खानखाना का नाम अति प्रसिद्ध है। ये अकबर के नवरत्नों में थे और साथ ही प्रधान सेनापति और मन्त्री रहे। यह संस्कृत, अरबी, फारसी और हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे। इनकी कविता में अनुभव और माधुर्य कूट-कूट कर भरा है। भाषा में रहीम तुलसी के बराबर ठहरते हैं। कहा

जाता है कि हिन्दी साहित्य में बरवै का सूत्रपात रहीमजी ने ही किया। रहीम सतसई, नायिका भेद, मदनाष्टक, रास पंचाध्यायी शृङ्गार सोरठ आदि रहीम रचित ग्रन्थ हैं। शुक्लजी के अनुसार रहीम जी का कविताकाल संवत् १६१० विक्रमी माना जाता है। रहीम कवि दोहों का माधुर्य देखिए :—

'सर सूखे पंछी उड़े, औरै सरन समाहिं।
दीन मीन बिन पच्छ के, कहु रहीम कहँ जाहिं॥
जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग॥
रहिमन रहला की भली, जो परसै चितलाय।
परसत मन मैला करै, सो मैदा जरिजाय॥'

रहीम के पश्चात् रसलीन हिन्दी के प्रसिद्ध कवि हैं। इनका असली नाम सैयद गुलामनवी था। यह हरदोई जिले में बिलग्राम के निवासी थे। संवत् १६६४ विक्रमी में इन्होंने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अङ्ग दर्पण' लिखा। ये हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके काव्य में सूक्तियों का चमत्कार अति प्रशंसनीय है। उनका निम्नलिखित दोहा हिन्दी साहित्य में अति प्रसिद्ध है :—

अमिय, हलाहल, मदभरे रचेत स्याम रतनार।
जियत, मरत, झुकि-झुकि परत, जेहि चितवत इकवार॥'

अकबर कालीन कवि आलम का नाम भी हिन्दी साहित्य में उल्लेखनीय है। इन्होंने 'माधवानह काम कंदला' नाम की प्रेम कहानी लिखी। इस ग्रन्थ में उन्होंने दोहा चौपाई शैली को ग्रहण किया है।

कवि जमाल भी राजपूताने के एक प्रसिद्ध कवि हुए हैं। नीति और शृङ्गार के दोहों में तो जमाल ने कमाल कर दिखाया है। देखिए:—

'जमाल ऐसी प्रीति कर जैसी केस कराय।
कै काला कै उजला जब तब सिर-स्यूं जाय॥
मनसा सो गाहक भये, नैना भये दलाल।
धनी बसत बैचे नहीं किस विधि बनै जमाल॥'

बिलग्रामी कवि सैयद मुबारिकअली भी हिन्दी साहित्य के अच्छे कवि गिने जाते हैं। इनके 'अलकशतक' और 'तिलकशतक' प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। साथ ही उत्प्रेक्षा अलंकार भी देखिए :—

परी मुबारक तिय बदन, अलक आप अति होय।
मनो चन्द की गोद में रही निसा सी सोय॥

आगरा निवासी अला मुहिब खाँ की रची संवत् १७८७ विक्रमी की 'खटमल बाईसी' देखिए :—

'जगत के कारन, करन चारौ वेदन के,
कमल में बसे वै सुजान ज्ञान धरि कै।
पोषन अवाने दुख मोचन तिलोकन के
सागर में जाय सोए, सेस सेज करि कै।
मदन जरायो जो, संहारे दृष्टि में ही सृष्टि,
बसे हैं पहार बेऊ, भाजि हरि वर के।
विधि हरि, हर और इनतें न कोऊ तेऊ,
खाट पै न सोवैं खटमल को डरि कैं।'

तदनन्तर ईशा उल्लाखाँ का नाम हिन्दी के विकास में अमर रहेगा। उनकी लिखी 'रानी केतकी की कहानी' हिन्दी भाषा के प्रारम्भिक काल की अमर निधि है।

संवत् १८७७ विक्रमी की नजीर अकबरा बादी की रचनाएँ अत्यन्त मधुर हैं। देखिए:—

'वा कृष्णमदन मोहन ने जब सब ग्वालों से यह बात कही।
ओ आपी से झट गेंद डंडा उस कलीदह में फेंक दई॥

व्यह लीला है उस नंद ललन की मनमोहन जसुमति छैया की।
रख ध्यान सुनो दंडवत करो जय बोलो कृष्ण कन्हैया की॥'

प्रिय उपमन्यु, तुमको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि शेख रँगरेजिन जिसके साथ आलम कवि ने विवाह कर लिया था तथा कवियित्री ताज हिन्दी साहित्य में विशेष स्थान रखती हैं। ताज कवियित्री की मधुर कविता देखिए:—

'सुनो दिल जानी मेरे दिल की कहानी तुम,
दस्त की विकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
देव पूजा ठानी मैं नुमाज हू भुलानी,
तजे कलमा कुरान सारे गुनन गहूँगी मैं।
स्यामला सलोना सिरताज सिर कुल्ले दिये,
तेरे नेह दाग में निदाध ह्वै दहूँगी मैं।
नन्द के कुमार, कुरबान ताँडी सूरत पै;
हौं तो तुरकानी हिन्दुवानी ह्वै रहूँगी मैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि मुसलमान कवियों ने हिन्दी की सराहनीय सेवा की है। आजकल के हिन्दी भाषा के मुसलमान साहित्यिक मुन्शी, अजमेरी, फलक, सैयद अमीर अली, जहूर बख्श, अख्तर हुसैन, मीर मुहम्मद बिलगामी अति प्रसिद्ध हैं। भारतेन्दु बाबू जी के शब्दों में ये सभी कवि प्रशंसा के पात्र हैं।

'इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिन्दुन वारिये।' अतएव प्रिय उपमन्यु अब तुम्हारी समझ में आजाएगा कि हमारी हिन्दी भाषा के सेवा करने वाले मुसलमान कवि भी हुए हैं।

तुम्हारा शुभेच्छु
राम

———

षष्ठम पत्र

कर्त्तव्य और चरित्र-निर्माण

प्रिय उपमन्यु,

अभी तुम विद्यार्थी हो। इस अवस्था में तुम्हारा कर्त्तव्य केवल विद्योपार्जन करना ही नहीं अपितु अपने चरित्र का निर्माण करना भी है। विद्याप्राप्त करने के साथ-साथ यदि तुम्हारे चरित्र में सत्यता, सदाचार, माता पिता गुरू की सेवा, कर्त्तव्य पालन आदि गुणों का समावेश नहीं हुआ, तो तुम्हारा विद्या प्राप्त करना निरर्थक है। इसलिए मैं इस पत्र में कुछ ऐसे गुणों का उल्लेख करूँगा जो तुम्हारे जीवन के लिए अति उपयोगी सिद्ध होंगे। साथ ही जिन पर आचरण करने से तुम अपने माता पिता तथा परिवार के ही प्रिय नहीं अपितु देश के प्रिय बन जाओगे तथा जिनसे तुम्हारे चरित्र का निर्माण हो सकता है।

देखो सबसे पहला कर्त्तव्य तुम्हारा विद्या प्राप्त करना है। मनुष्य जीवन को सुखमय एवं उन्नतशील बनाने के लिए विद्या अत्यन्त आवश्यक है। विद्या से मनुष्य के हृदय में प्रकाश होता है। यह धन, दान देने से अधिकाधिक बढ़ता ही चला जाता है। विद्या से मनुष्य विनयी होता है। विनयी व्यक्ति के लिए संसार के सभी ऐश्वर्य अनायास ही प्राप्त हो जाते हैं। विद्या से मानसिक विकास होता है। आज के जगत में अनेक नवीनतम आश्चर्य विद्या के सतत अभ्यास के फल ही कहे जाएँगे। संसार में विद्या के समकक्ष कोई अन्य ज्ञान प्रदायक तथा ज्ञान वर्द्धक साधन नहीं है। आत्मोन्नति विद्या द्वारा ही सम्भव है। उदर पूर्ति की

समस्या हल करके के लिए तो विद्या महामन्त्र है। इन सबसे ऊपर विद्या मनुष्य का आभूषण है। अतः तुम्हें विद्या लग्न एवं परिश्रम से प्राप्त करनी चाहिए।

देखो विद्यार्थी जीवन के कतिपय सिद्धान्त हैं। सिद्धान्त-पूर्ण-जीवन में ही सफलता मिल सकती है। विद्यार्थी जीवन के विशेष लक्षण होते हैं। विद्वानों के अनुसार एक विद्यार्थी के लक्षण निम्न लिखित होते हैं।

'काक चेष्टा, वकध्यानं।
श्वान निद्रा, तथैव च॥
अल्पा हारी, गृह त्यागी।
विद्यार्थी, पञ्च लक्षणम्॥'

अर्थात् विद्यार्थी को कौवे की भाँति प्रयत्नशील, बगुले की भाँति ध्यानावस्थित, कुत्ते की भाँति कम सोने वाला, थोड़ा भोजन करने वाला तथा माता पिता भाई बहिन, कुटुम्ब के व्यक्तियों तथा सम्बन्धियों से दूर रहकर विद्याभ्यास करने वाला होना चाहिए। उपर्युक्त पाँचो लक्षण विद्यार्थी में स्वभावतः होने चाहिए। यदि तुम सच्चे विद्यार्थी बनना चाहते हो तो ऊपर लिखे पाँचों गुण अपनाओ।

तदनन्तर तुम्हें सबसे अधिक ध्यान अपने स्वास्थ्य पर देना चाहिए। बिना सुन्दर स्वास्थ्य के संसार के सभी सुख निरर्थक हैं। अस्वस्थ और रोगी मनुष्य इस संसार में सदैव दुखी रहेगा। विद्वानों के मतानुसार शरीर को स्वस्थ रखने के लिए ब्रह्मचर्य, संयम, व्यायाम, खेल, स्वच्छता, शुद्ध जल, वायु और पोषक भोजन अत्यन्त आवश्यक हैं। विद्यार्थी जीवन में ब्रह्मचर्य का बड़ा महत्व है। प्राचीन काल में मानव आयु सौ वर्ष की मानी गयी थी। उसको चार भागों में विभाजित कर दिया गया था। प्रथम भाग में प्रत्येक व्यक्ति को २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत को धारण

करते हुए विद्यापार्जन करना पड़ता था। यदि गम्भीरतया विचार किया जाय तो ब्रह्मचर्य का पालन करना ही सबसे बड़ा तप है। इस व्रत का पालन करने से मनुष्य देवता हो जाता है। तुम विद्यार्थी हो। तुमको इस धर्म का अवश्य पालन करना चाहिए।

देखो ब्रह्मचर्य से आत्मिक और मानसिक विकास होता है। प्रखर बुद्धि तथा तीव्र स्मरण शक्ति ब्रह्मचर्य पर ही निर्भर हैं। प्राचीन काल में ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही विद्यार्थियों को वेद जैसे बृहतकाय ग्रन्थ कण्ठस्थ हो जाते थे। ब्रह्मचर्य से निर्भीकता, साहस, वीरता, उत्साह, अध्यावसाय आदि गुण स्वभावतः ही आ जाते हैं। ब्रह्मचर्य लोक परिलोक के कल्याण के लिए अति आवश्यक हैं। अखिल सृष्टि ब्रह्मचर्य के बल मे अपने अधिकार में हो सकती है। भीष्म पितामह और वीर हनुमान का नाम किसने नहीं सुना होगा। इनमें अतुल शक्ति ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही थी। संयम का रखना भी स्वस्थ जीवन के लिए अति वाञ्छनीय है। सोने, उठने, बैठने, जागने, भोजन आदि करने के भी विशेष नियम होने चाहिए। व्यायाम भी स्वास्थ्य के लिए अति लाभदायक है। व्यायाम से पाचन शक्ति तीव्र, शरीर में स्फूर्ति, दृढ़ता आ जाती हैं। इससे शरीर सुडौल, शक्तिशाली हो जाता है। अच्छा स्वास्थ्य होने के कारण हमारी बुद्धि भी स्वस्थ होती है। अंगरेजी में एक लोकोक्ति अक्षरशः सत्य है:—

'A Sound mind in a sound body'

स्वच्छ शरीर, स्वच्छ वस्त्र, स्वच्छ निवास स्थान, स्वच्छ जलवायु, स्वच्छ भोजन अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं। पौष्टिक, निर्दोष अथवा सात्विक भोजन आरोग्य शरीर के साधन हैं। सात्विक भोजन से विचार भी शुद्ध रहेंगे। मदिरा पान आदि से दूर रहना चाहिए। इस प्रकार तुम्हारी समझ में आगया होगा कि यदि स्वास्थ्य अच्छा होगा तो तुम्हारा चरित्र भी अच्छा होगा

क्योंकि महापुरुषों का निम्नलिखित अमर वाक्य अक्षरशः सत्य है :—

'शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्'

प्रिय उपमन्यु, तुम समझ गये होगे कि चरित्र के लिए स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन तथा स्वस्थ विचार होना आवश्यक है। इनके अतिरिक्त तुम्हारा कर्तव्य है सेवाभाव को अपनाना। माता पिता, जिन्होंने तुम्हें जन्म दिया है, पालन पोषण कर बड़ा किया है तथा गुरु, जिन्होंने तुमको शिक्षा दी है, तुम्हारे लिये अति पूज्य हैं। उनकी आज्ञा मानना, सेवा करना तथा उनसे प्रेम करना तुम्हारा सबसे बड़ा धर्म है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने इसके विषय में कैसे सुन्दर भाव प्रकट किये हैं:—

माता पिता प्रभु की बानी, बिनहिं विचार करिय शुभ जानी।
गुरु पितु मातु स्वामि सखि पालें, चलत सुमगु पगु परत न खालें॥

कहने का तात्पर्य यह है कि माता, पिता और गुरु की सेवा करना तुम्हारा सबसे प्रथम धर्म है। माता-पिता और गुरु की भक्ति ही सबसे बड़ी भक्ति है। सम्मान, प्रेम सेवा और आज्ञा पालन भक्ति के अंग हैं। माता-पिता और गुरु का सम्मान, तीन प्रकार से मन, वचन और कर्म से होता है। मन से सम्मान करने का अर्थ यह है कि हम कभी माता, पिता और गुरु के दोषों का स्वप्न में भी अपने मन में विचार न करें। वाणी से सम्मान करने का अर्थ यह है कि हम सदा उनसे मधुर शब्दों का प्रयोग करें। आदि में 'पूज्य' तथा अन्त में 'जी' शब्द लगाकर उनको सम्बोधित करें। जैसे पूज्य पिताजी, पूज्य माताजी, तथा पूज्य गुरुजी। यदि माता पिता तथा गुरु किसी बात के लिये हमसे कहें तो हमें उत्तर में 'जी' शब्द का प्रयोग करना चाहिए। कर्म द्वारा सम्मान करने का अर्थ यह है कि उनके समाने चारपाई, कुर्सी पर तुम्हे न बैठना चाहिए। साथ ही उनके आज्ञा देने पर तुरन्त पालन करना चाहिए

माता पिता के प्रति प्रेम का व्यवहार करना तुम्हारा कर्तव्य है। पुत्र के प्रेम के अभाव में माता पिता का कोमल हृदय मुरझा सकता है। पुत्र के रूखे और शुष्क व्यवहार से उनका सुकुमार मानस सूख सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि माता पिता गुरु की सेवा सब सिद्धियों की दाता है। धर्मराज युधिष्ठिर के भीष्म पितामह से श्रेष्ठतम धर्म की व्याख्या पूछने पर भीष्म पितामह ने निम्नलिखित उत्तर दिया था :—

'माता पिता की भक्ति ही सबसे बड़ा धर्म है। तीनों लोक, तीनों वेद, तीनों अग्नि और तीनों आश्रम इत्यादि माता पिता और गुरु में विद्यमान होते हैं। जो माता पिता और गुरु की भक्ति करता है वह तीनों को जीत लेता है। जो इन तीनों को आदर करता है, वह इस संसार से तर जाता है। जिसने इन तीनों का अनादर किया, वह इस संसार में डूब गया।'

कहने का तात्पर्य यह है कि चरित्र-निर्माण के लिये प्रारम्भ से ही माता, पिता और गुरु के प्रति सम्मान, प्रेम, आज्ञा पालन और भक्ति करने की आदत डालनो चाहिए।

तदनन्तर सत्यता, शील, विनय, परोपकार आदि चरित्र-निर्माण के लिए आवश्यक गुण हैं। चरित्र निर्माण के लिए सबसे बड़ा गुण है सत्यता को अपनाना। सत्य ही सबसे बड़ा तप और पुण्य है। वेद के अनुसार पृथ्वी के भार को उठाने की शक्ति सत्य में ही है। सहस्रों अश्वमेघ यज्ञों की यदि सत्य से तुलना की जाए तो सत्य ही भारी ठहरेगा। जो व्यक्ति सत्य बोलता है, उसके हृदय में भगवान् निवास करते हैं। किसी कवि ने ठीक कहा है:—

'साँच बरोवर तप नहीं, झूंठ बरोवर पाप।
जाके हृदय साँच है, ताके हृदय आप॥'

जो व्यक्ति सत्य का पालन करता है, उसकी बातों में सब विश्वास करते हैं। संसार के सारे कार्य विश्वास पर ही निर्भर हैं।

यदि आज संसार से एक दूसरे का विश्वास उठ जाए तो संसार के सारे कार्य रुक जाएँ। कृषक खेत में बीज इस विश्वास से बोता है कि अनाज उत्पन्न होगा। माली पौधा इस विश्वास से लगाता है कि वह फलेगा, फूलेगा। धोबी कपड़े इस विश्वास पर धोता है कि उसे धुलाई मिलेगी। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में से विश्वास उठ जाए तो आज ही मानव पागल हो जाए। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु सत्य का ही पालन करती है। सूर्य सदैव नियमित रूप से अन्धकार के आवरण को हटाने का प्रयास करते हैं। सारांश यह है कि हमारी सृष्टि सत्य पर ही अवलम्बित है। इसलिए मनुष्य के लिये सत्य बोलना सबसे बड़ा धर्म एवं कर्तव्य है। समाज और व्यक्ति का कल्याण सत्याश्रित है। सत्य पालन से चरित्र का निर्माण होता है क्योंकि इसके पालन से आत्म-अनुशासन तथा आत्म नियन्त्रण की भावना प्रबल होती है। सत्य पालन से चित्त की वृत्तियाँ, कलुषित भावनाओं और असत विचारों का विरोध होता है। सत्य बोलने में सन्तोष, धैर्य, त्याग, सहिष्णुता, साहस शील आदि गुण स्वभावतः ही आते हैं। भगवान् राम तथा सत्य हरिश्चन्द्र जैसे महापुरुषों का चरित्र सत्य गुण को अपनाने से ही सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। यदि आज हमारे देश में सभी व्यक्ति सत्य का पालन करें तो चोर बाजारी, भ्रष्टाचार्य इत्यादि एक दिन में ही बिलीन हो जाएँ।

अतएव उपमन्यु तुम सदैव सत्य का पालन करो। तुम्हारे मन में, वचन में, कर्म में सत्य की गति होनी चाहिए। जीवन पथ पर सत्य का सम्बन्ध लेकर बढ़े चलो और सदैव अपने समक्ष अमर वाक्य याद रक्खो :—

'नभ टूटें, पृथ्वी गले, पर नहिं छोड़ें सत्य'

उपमन्यु देखो सत्य के अनन्तरशील और विनय का स्थान है। तुम विद्यार्थी हो। अन्य उद्देश्यों के साथ-साथ विद्या का प्रमुख

उद्देश्य विनय देना है। कहा भी जाता है 'विद्या ददाति विनयम्' जिस प्रकार फलों से लदा हुआ वृक्ष झुक जाता है। इसी प्रकार विद्वान् व्यक्ति को भी अधिक विनयी होने की आवश्यकता है। विनयी व्यक्ति सभी को प्रसन्न कर सकता है। मुझे रेल की एक घटना का स्मरण हो आया कि एक व्यक्ति के विनम्रता से पूर्ण शब्दों ने उसे कैसा सर्वप्रिय बना दिया। तुम जानते हो आजकल रेलों में कितनी भीड़ चलती है। कानपुर स्टेशन पर गाड़ी पूर्ण रूप से भर गई थी। एक डिब्बा जिसमें मैं बैठा था, खचाखच भरा था। श्वास लेने को भी स्थान नहीं था। यहाँ तक एक सूट बूट धारी शौचालय में खड़े थे। पर अनेक व्यक्ति आते, चढ़ने का प्रयत्न करते। कोई बाहर से खिड़की खटखटाता, कोई क्रोध से पूर्ण होकर डिब्बे के अन्दर बैठे हुए व्यक्तियों के लिए अपशब्द कहता। लेकिन डिब्बे के अन्दर बैठे यात्री किसी को न आने देते। अन्त में एक सज्जन आये। उन्होंने डिब्बे के अन्दर बैठे यात्रियों से बैठने को कहा—

'क्या आप हमारे सिर पर बैठेंगे' डिब्बे में बैठे यात्रियों ने कहा

सज्जन ने उत्तर दिया 'कदापि नहीं' मेरा विचार तो आप के चरणों में बैठने का था; यदि थोड़ा सा स्थान मिल जाता'

सज्जन के इन विनय भरे शब्दों ने डिब्बे के सभी व्यक्तियों पर मन्त्र का सा प्रभाव डाला। सभी यात्रियों के हृदय करुणा से भर गये। फलतः सज्जन जी को स्थान मिल गया।

कहने का तात्पर्य यह है कि विनय और शील गुण वाले व्यक्ति के लिए सभी सहृदय स्थान देते हैं। उसे इस संघर्षपूर्ण संसार में भी कभी किसी जटिल समस्या को सुलझाने में अधिक समय नहीं लगता। यदि कोई मनुष्य विद्वान है और साथ ही विनय-शील-सम्पन्न भी है तो उसको सभी मनुष्य बड़े आदर और उत्सुकता

की दृष्टि से देखते हैं। यदि तुम चाहते हो कि लोग तुम्हारा सत्कार करें, तो तुमको सर्वतोभाव से विनयशील सम्पन्न होना चाहिए।

उपमन्यु तुम, जानते हो कि मधुर शब्दों का प्रयोग एक दूसरे व्यक्ति के हृदय में कैसे स्थान कर लेता है। मधुरभाषी को सभी प्रेम की दृष्टि से देखते हैं। चाहे कोई व्यक्ति कैसा ही निर्दयी क्यों न बैठा हो, मधुरभाषी के मधुर शब्दों द्वारा, उसका क्रोध कोसों दूर भाग जाता है। उसके हृदय में मानवता जाग्रत होने लगती है। कहने का तात्पर्य यह कि मधुर शब्दों में दूसरों को अपने अनुकूल करने की शक्ति होती है। किसी कवि ने अक्षरशः ठीक कहा है—

'कोयल काको देत है, कागा कासों लेत।
तुलसी मीठे बचन सों जग अपनो कर लेत॥'
'तुलसी मीठे बचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
वसोकरन यह मन्त्र है, परि हरु वचन कठोर॥'

कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए मधुरभाषी होना अति आवश्यक है।

परोपकार तथा समाज सेवा आदि के गुण अपनाना भी तुम्हें अपने जीवन को सफल बनाने के लिए अति आवश्यक है। परोपकारी होने का गुण तो तुम्हें प्रकृति से सीखना चाहिए। वृक्ष फल एवं छाया दूसरों के लिए प्रदान करते हैं। मेघ दूसरों के हित के लिए ही जल को वर्षा करते हैं। सरिताएँ दूसरों के उपकार के लिए स्वच्छ जल धारण करती हैं। पृथ्वी नाना प्रकार के अन्न आदि दूसरों के लाभ के लिए ही उत्पन्न करती है। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य जीवन की सफलता ही दूसरों के साथ उपकार करने में है।

प्रिय उपमन्यु, समाज सेवा तो आज के युग का सबसे बड़ा धर्म एवं कर्तव्य है। हमारा प्राचीन भारतीय इतिहास इस बात

का साक्षी है कि महर्षि दधीचि ने अपनी हड्डियों का दान संसार के कल्याण के लिए ही किया था। श्री रामचन्द्र जी ने राक्षसों का संहार मनुष्य जाति के उनके अत्याचारों से मुक्त करने के लिए ही किया था। हमारा भारतवर्ष भी आज कतिपय मातृभूमि के सच्चे सपूत तथा समाज सेवकों के अथक परिश्रम के फलस्वरूप ही विदेशियों के बन्धन से मुक्त हुआ है। निस्वार्थ कार्य और आत्म-बलिदान ही समाज सेवा के आवश्यक गुण हैं। यदि आज हम सभी भारतवासी इन दोनों को अपनावें तो हमारे देश की दशा शीघ्र ही सुधर सकती है। हमारे देश से निःरक्षरता का भूत अविलम्ब ही हमारे थोड़े से प्रयास से दूर हो सकता है। यह कलङ्क शिक्षित लोगों के प्रयत्न से शीघ्र ही दूर हो सकता है। इसी प्रकार अन्न का अभाव भी आज हमारे देश के लिए जटिल समस्या बना हुआ है। आज हमारे देश की सभी समस्याएँ प्रत्येक व्यक्ति के समाज सेवक बनने से दूर हो सकती हैं। इसलिये प्रिय वत्स मानव को मानव समझो। याद रक्खो मानव को मानव मारकर सुखी नहीं हो सकता है। सभी धर्मों का प्रथम नियम है 'अहिंसा परमो धर्मः'। अतः सभी के साथ दया का वर्ताव करो। दूसरों को सुखी बनाने में ही अपना कल्याण है। आधुनिक कवि-सम्राट डाक्टर मैथिलीशरण गुप्त के शब्द कैसे मार्मिक हैं—

"यही पशु प्रवृत्ति है कि आप आप ही चरे।
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिये मरे॥"

अतः उपर्युक्त बातों से प्रिय वत्स तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि अध्ययन करना, माता पिता गुरु की सेवा करना, सत्यता को अपनाना, नियमित जीवन व्यतीत कर स्वस्थ रहना, विनयशील-सम्पन्न होना, दूसरे प्राणियों पर दया करना तथा लोक सेवा में ही अपने जीवन को सफल समझना आदि बातें तुम्हारे जीवन को उज्ज्वल बनाएँगी। उपर्युक्त कर्तव्यों तथा गुणों को अपनाने से ही

तुम्हारे चरित्र का निर्माण हो सकता है। सत्चरित्र ही जीवन की सार्थकता है। किसी अँगरेजी कवि ने ठीक ही कहा है—

'When wealth is lost, nothing is lost.
When health is lost, something is lost,
When cheracter is lost, all is lost.'

अर्थात् धन का नाश, नाश नहीं है, स्वास्थ्य का गिरना अल्प नाश है और चरित्र का नाश, सर्वनाश है।

इसलिए प्रिय वत्स सभी गुणों से पूर्ण अपने जीवन को आदर्श तथा अनुकरणीय बनाओ। इसमें तुम्हारे लोक कल्याण की भावना निहित है।

तुम्हारा शुभेच्छ
राम

सप्तम पत्र

मेरी मक्का की यात्रा

प्रिय उपमन्यु,

प्रसन्नता है कि तुम मेरे पत्रों में अधिकाधिक रुचि लेते जारहे हो। तुम्हारी उत्सुकता का ध्यान रखकर ही मैं पत्रों में नवीन-नवीन बातें लिखता रहता हूँ। मेरी इच्छा भी यही रहती है कि नित्य ही ऐसी नवीन बातें तुम्हारे लिए लिखूँ। जो केवल तुम्हारी रुचि की ही पूर्ति न करें वरन् तुम्हारी ज्ञान की वृद्धि भी करें। तुम यह भी जानते हो कि मैं भ्रमण करने में बड़ा आनन्द लेता हूँ। सम्भवतया यदि यात्रा आदि करने की ओर मेरी विशेष रुचि न होती तो तुम से परिचय भी न होता। यह मेरी रामेश्वर यात्रा का ही फल है कि तुम्हारे पिता जी तथा तुम से रेल में मेरा परिचय हुआ था। इस वर्ष ग्रीष्मावकाश में, मैंने मक्का की यात्रा की थी। इस पत्र में मेरा विचार उसी यात्रा के विषय में ही कुछ उल्लेख करना है। तुम्हारे साथी तथा मित्र यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि तुम्हारे परिचित लेखक महोदय क्या मक्का हज की यात्रा करने गये थे ? मैं वैदिक धर्म का अनुयायी हूँ। इस कारण यदि वे आश्चर्य करें, तो कोई बात नहीं। किन्तु तुम जानते हो कि मैं देश विदेश में घूमने में आनन्द लेता हूँ। मेरे मित्र हमीद के पिता जी जिन्हें मैं अब्बाजान कहता हूँ, हज के लिए मक्का जाने का विचार कर रहे थे। एक दिन मैंने भी बातों ही बातों में जाने की इच्छा प्रकट की। बात गम्भीर होती गयी। अन्त में अब्बाजान के साथ जाने का पूर्ण निश्चय होगया। मक्का देखने

की मेरी लालसा तीव्रतर होती गयी। अन्त में घर से यात्रा के लिए गमन करने का दिन आ ही गया।

७ जून के प्रातःकाल हम चलने को थे। अब्बाजान ने यात्रा के के लिए मेरा नाम रामजीलाल से बदल कर अल्लादीन कर दिया। उन्हें डर था कि मेरा नाम न बदलने से अरब जैसे मुसलिम देश में मेरे लिए कोई संकट उपस्थित न हो जाए। यद्यपि मेरे बहुत से शुभचिन्तक मेरे इस साहस पर आलोचना कर रहे थे किन्तु मैं जाने का दृढ़ संकल्प कर चुका था। अतः अब्बाजान के साथ सभी आवश्यक तैयारियाँ कर मैं मोटर द्वारा प्रातःकाल आगरा के राजामण्डी स्टेशन पर पहुँच गया। स्टेशन पर अपार भीड़ थी। गाड़ी आने में लगभग २५ मिनट का बिलम्ब था। बम्बई के दो टिकट खरीद लिये गये। टिकट खरीदने में मुझे कष्ट तो अवश्य हुआ था किन्तु मिलने पर हर्ष का पारावार न था। बम्बई मेल में सबार होगये। मार्ग में तीव्रगति से दौड़ती हुई गाड़ी से प्रकृति की छटा अधिक आकर्षक प्रतीत होती थी। लहराते हुए वृक्ष, हरे-भरे खेत, खिले हुए पुष्पों से भरे स्वच्छ जल पूर्ण पोखर गाड़ी से देखने पर अत्यन्त मनोहर लगते थे। गाड़ी में बैठे ऐसा प्रतीत होता था कि गाड़ी और वृक्षों में दौड़ने की होड़ लगी हो। जितनी तीव्रगति से गाड़ी आगे को दौड़ती थी, उतनी ही तीव्रगति से वृक्ष पीछे को। मार्ग में आई हुई सरिताओं, नाले, नहरों आदि में आकर्षक सौन्दर्य दिखाई देता था। यदि रेल की पटरी के समानान्तर जाती हुई सड़क पर कोई मोटर हमारे साथ दौड़ती मिल जाती तो गाड़ा तथा मोटर में बैठे यात्रियों के लिए मनो-रंजन का विषय बन जाती थी। अन्त में जब हमारी रेल आगे निकल जाती तो हम गर्व से फूले न समाते थे। अब्बाजान बैठे माला फेरते जाते थे और मैं मक्का देखने की कल्पनाओं में आनन्द लेता जाता था। गत रात्रि को मैं आवश्यक तैयारियों

तथा मित्रों आदि से वार्तालाप आदि करने में थोड़ी देर के लिए भी सो न सका था, इसलिए मक्का की कल्पनाओं में आनन्द लेते हुए ही रात्रि होने से पूर्व निद्रा देवी ने मुझे आ घेरा। मैंने जगते रहने का प्रयास किया किन्तु व्यर्थ, मैं सो गया।

लगभग ११ बजे थे। मेरी आँखें खुल गयीं। गाड़ी तीव्रगति से दौड़ रही थी। खिड़की के बाहर का दृश्य बड़ा मनोहारी था। चन्द्रिका चर्चित रजनी में प्रकृति अधिक निखरे हुए सौन्दर्य में दिखाई देती थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो चन्द्रमा अपनी दुग्धवत किरणों से वृक्षों को स्नान करा रहा हो। बाहर खिड़की से झाँकने पर शीतल वायु के झोंके एक क्षणभर के लिये शिमिला का स्मरण करा देते थे। तारों से जगमगाता हुआ आकाश, चन्द सहित हमारे साथ दौड़ता हुआ दिखाई देता था। वृक्ष पीछे को दौड़ते हुए दिखाई देते। मैंने आश्चर्यान्वित होकर अब्बाजान से पूछा। अब्बाजान यह कहकर कि 'हमारे शबाब चाँद की तरह हमारे साथ जाते हैं और पाप पेड़ों की तरह पीछे रह जाते हैं', चुप हो गये। मैं उस सौन्दर्य को देखकर अति मुग्ध था। चाँदनी रात में प्रकृति वस्तु की प्रत्येक वस्तु नवीन शोभा से सम्पन्न दिखाई देती थी। रेल की पटरी के किनारे सफेद पुष्पों और जल पूर्ण पोखरो में जब गाड़ी के विद्युत दीपों का प्रकाश तथा ऊपर से नीलाकाश अगणित तारों सहित चन्द्रमा का प्रतिविम्ब पड़ता तो एक आकर्षक दृश्य उत्पन्न हो जाता था। जिसको देखकर नेत्र चकाचौंध हो जाते थे। विद्युत दीपों से प्रकाशित नगर तो दूर से दीपकों के नगर प्रतीत होते थे। गाड़ी अचानक रुकी। देखने पर ज्ञात हुआ कि यह इटारसी था। स्टेशन पर भिन्न-भिन्न प्रकार के आकर्षक स्वरों में बेचते हुए खोंमचे वाले उदासीन व्यक्ति को भी एक क्षण के लिये हँसा देते थे। गाड़ी चल दी। साथ ही मुझे की निन्द्रादेवी अपने अधिकार में करने लगी।

इस प्रकार आनन्द लेते हुए भुसावल पहुँचे। प्रातःकालीन भास्कर नीलाकाश से झाँकने भी न पाये थे कि लोगों को उनके आगमन की सूचना मिल गयी। रेल के सभी यात्री जग पड़े थे। रेल चलती जाती थी। लाग शौचादि से निवृत होते जाते थे। मार्ग के पर्वतीय दृश्य को देख कर मन मुग्ध हो जाता था। दूर से देखने पर ये पर्वत क्षितिज की रेखा पर घिरे श्याम मेघों के समान दिखाई देते थे। जब प्रातःकालीन सूर्य की रश्मियों ने पर्वतों पर उत्पन्न हुई बनस्पतियों को स्पर्श किया, तो उन पर नाना प्रकार के पुष्प खिल उठे। निराली शोभा को देखकर नेत्र तृप्त थे। हृदय विशेष प्रकार के आनन्द से परिपूर्ण था। कहने का तात्पर्य यह है कि मार्ग के मनोहर दृश्यों का आनन्द लेते हुए हम ५ बजे संध्या को बम्बई पहुँचे।

बम्बई से हमें समुद्री यान द्वारा जाना था अतएव दूसरे दिन हम जलयान द्वारा बम्बई के बन्दरगाह से रवाना हुए। जहाज में हजारों यात्री बैठे थे। उसकी विशालता को देखकर हमें बड़ा आश्चर्य था। उसमें भोजनालय, शोचागार, क्रीड़ा प्रांगण, बाजार आदि सभी थे। देखने से जहाज किसी विशाल नगर के एक छोटे से मुहल्ले जैसा प्रतीत होता था। बड़ी तीव्र गति से चला जारहा था। समुद्र की वायु के झोंके, किनारे पर खड़े हुए नारियल के पेड़ आदि हमें एक विशेष आनन्द देते थे। लगभग आठ दिन की यात्रा के पश्चात् हम अदन नगर में पहुँचे। यह स्वेज़ नहर के मुख पर एक बन्दरगाह है, यहाँ अँगरेज काफी संख्या में हैं। लगभग पाच घंटे विश्राम करने के पश्चात् हमारी यात्रा का पुनः प्रारम्भ हुआ। स्वेज नहर को देखकर मनुष्य के कार्यों पर आश्चर्य होता है। स्वेज नहर की चौड़ाई, लम्बाई तथा गहराई आदि सभी अश्चर्य पूर्ण हैं। दूसरे दिन हम अपने आनीम बादरगाह जहा पर पहुँचे।

जद्दा से मक्का केवल साठ मील दूर रह गया था। वहाँ से मक्का जाने के केवल तीन साधन हैं—पैदल, ऊँटों द्वारा, तथा मोटर द्वारा। मोटर का किराया लगभग १४ रुपये लगता है। अब्बाजान की इच्छा मोटर द्वारा मक्का पहुँचने की थी किन्तु मैंने ऊँट द्वारा यात्रा करने का प्रस्ताव अब्बाजान के सामने रक्खा। मैं जानता था कि यदि ऊँट द्वारा यात्रा की जाएगी, तो मार्ग के दृश्यों को पूर्ण रूप से देख सकेंगे। अतः हम लोगों ने ऊँट द्वारा ही जद्दा से मक्का की यात्रा प्रारम्भ की। ग्रीष्मकाल में अरब में गर्मी की प्रचण्डता असहनीय होती है। इसके अतिरिक्त यदि कहीं तीव्र गति से आँधी चलने लगे तो प्रलय के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। अतएव यात्रा का समय रात्रि ही रहती थी। ऊँटों पर सवार हुए पंक्तिबद्ध यात्री जब चलते तो अति आनन्द आता था। अब्बाजान और मैं एक ही ऊँट पर बैठे थे। अब्बाजान कभी कभी बैठे बैठे ही सो जाते थे किन्तु यदा कदा जब ऊँट जार से बलबलाने लगता तो अब्बाजान की निद्रा टूट जाती थी। मार्ग के दोनों ओर रेत के टीले थे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो पर्वतों को काट कर मार्ग बनाया गया हो।

रात्रि के अंधकार में ऊँचे-ऊँचे रेत के टीले पर्वत ही प्रतीत होते थे। ऊँटों की गर्दन में बँधी हुई घंटियों की नाना प्रकार की ध्वनियाँ, एक पंक्ति में प्रकाश दीपकों की जगमगाहट, मन को मुग्ध करते थे। लगभग आधी मील लम्बा हमारा काफिला था। रात्रि की यात्रा अति सुन्दर लगी। प्रातःकाल होते ही काफिला अपने एक निश्चित स्थान पर ठहर गया। दिन में भोजन आदि किया गया। रात्रि होते ही फिर मक्का के लिए काफिला रवाना हो गया। लगभग पाँच विश्राम लेने के अनन्तर मक्का की मसजिद आदि की मीनारें दिखाई देने लगी थीं। सभी यात्रियों के मुख पर एक विशेष प्रकार की प्रसन्नता दिखाई देती थी। सभी यात्री मक्का के

दर्शनों के लिए लालायित थे कोई सज्जन कहते थे कि हमारा भाग्य अच्छा है। इसीलिए मक्का की सैर करने का हमें सुअवसर प्राप्त हुआ है। अब मक्का केवल एक या दो मील की दूरी पर रह गया था। सब की टकटकी मक्का नगर की ओर लगी हुई थीं। उस समय मिनटें घन्टों के समान व्यतीत होती थी। ऊँटों की धीमी गति पर क्षोभ आता था।

अन्त में हम मुहम्मद साहब की जन्मभूमि एवं जन्म स्थान मक्का नगर में पहुँचे। यह नगर मुसलमानों का प्रधान तीर्थ स्थान है। यद्यपि इसकी जन संख्या एक लाख से कम है फिर भी इसकी गणना संसार के प्रसिद्ध नगरों में होती है। लाल सागर के जद्दा बन्दरगाह से ६० मील पूर्व की ओर यह नगर एक उजाड़ घाटी में बसा है। इसके चारों ओर मरुस्थल तथा नग्न पर्वत की श्रेणियाँ हैं। वहाँ देखने पर विदित हुआ कि यहाँ किसी प्रकार का व्यवसाय तो होता नहीं हैं। वहाँ हिन्दुस्तानी नबाब, नाइजीरिया के हबशी, अरब के बद्दू आदि सभी दिखाई देते थे। अब्बाजान की तरह वहाँ दूर-दूर के देशों से आकर कई सप्ताह पूर्व से मुसलमान इकट्ठे थे। ये लोग मक्का नगर में अथवा आस-पास के स्थानों में ठहरे थे, यहाँ प्रवेश करते ही प्रत्येक यात्री एक विशेष प्रकार के वस्त्र धारण करता है। जीवन पर्यन्त उसो साधारण वस्त्र को पहनने की प्रतिज्ञा करता है। यही वस्त्र मृत्यु के उपरान्त कफन का काम देता है। इस वस्त्र में दो बिना बाँह के बिना सिले हुए खासा मलमल या ऊन के टुकड़े होते हैं। एक टुकड़ा कन्धे पर डाल दिया जाता है और दूसरा कमर में लपेट लिया जाता है। हज की यात्रा करते समय प्रत्येक यात्री का सिर खुला रहना चाहिए। अब्बाजान ने भी ऐसा ही वस्त्र तैयार कराया था। वे अन्य यात्रियों की भाँति सभी कार्य करते थे।

नगर में प्रवेश करने के बाद सभी धार्मिक यात्री मक्का की सबसे पवित्र मसजिद अलहाम में जाते हैं। इसमें बड़े बड़े ४२ फाटक हैं। इसका आँगन बड़ा विशाल है। सहस्रों व्यक्ति इसमें नमाज पढ़ सकते हैं। इसी मसजिद में पवित्र काबा और बैत-अल्लाह अर्थात् ईश्वर का घर स्थित है। यह एक अति प्राचीन चौकोर पत्थर है। कहा जाता है इसको इब्राहीम ने बनाया था। मुसलमान उसे बड़ी श्रद्धा से देखते हैं। मसजिद के दक्षिण पूर्व के कोने पर चाँदी से जड़ा हुआ चालीस इंच की ऊँचाई पर काला पत्थर है। देखने से यह उल्कापात का काला पत्थर मालूम पड़ता है। मुसलमानों का विश्वास है यह पत्थर काबा बनाने के लिए ग्रेवियल फरिश्ते द्वारा लाया गया था। उसने इब्राहीम को उपहार रूप में दिया था। इस पत्थर के समीप ही अति प्रसिद्ध और पवित्र जमजम नाम का कुँआ है। मुसलमानों का कहना है कि अरबों के पितामह हाजी और इस्माइल ने इसी कुएँ के जल से अपनी पिपासा शान्त की थी। इसीलिए इस कुए का जल अत्यन्त पवित्र माना जाता है। दूर दूर के मुसलमान इस पानी से बोतलें भर कर मँगाते हैं। जमजम के कुँए का जल हिन्दुओं को पवित्र नदी गंगा के जल के समान पवित्र माना जाता है।

प्रिय उपमन्यु, अब मैं तुम्हें यात्रियों के कार्यक्रम के विषय में बताऊँगा। तुम जानते हो कि प्रत्येक मुसलमान की इच्छा होती है कि वह जीवन में एक बार हज करे अर्थात् मक्का के दर्शन करे। इसीलिए दूर-दूर के देशों से असंख्य मुसलिम स्त्री-पुरुष और बच्चे मक्का के दर्शन करने के लिए आते हैं। रोज़ा, नमाज खैरात और हज यात्रा ये चार मुसलमानों के कर्तव्य बताये गये हैं। इनका पालन करना प्रत्येक मुसलमान का धर्म है। दिन रात में प्रत्येक मुसलमान काबा की ओर मुख करके पाँच बार नमाज़ पढ़ता ह। जो यात्री हज कर आते हैं, वे हाजी जी कहलाते हैं।

हाँ तो मक्का में पहुँचते ही सभी यात्री सबसे प्रथम अलहाम मसजिद में जाते हैं। इस मसजिद का आँगन अत्यन्त विशाल है। प्रत्येक मुसलमान उस आँगन में सात परिक्रमा करता है। तदनन्तर काले पत्थर को चूमता है। यह काला पत्थर जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ, अति पवित्र माना जाता है। तदनन्तर प्रत्येक मुसलमान पवित्र ज़मज़म के कुएँ का पानी पीता है।

इसके पश्चात् सभी हाजी लोग पंक्तिवद्ध होकर मिना की घाटी की ओर अत्यन्त धीमी गति से जाते हैं। रात्रि उसी घाटी में व्यतीत की जाती है। दूसरे दिन प्रातःकाल होने पर वे समीप के एक पर्वत पर चले जाते हैं। पहाड़ पर पहुँचने में उन्हें एक दिन लगता है। मार्ग में सभी एक ही वेश में चलते हुए अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होते हैं। उस समय या तो मुसलमान धर्म की आदि कथाएँ कहते चलते हैं अथवा आपस में मनोरंजक बातें होती चलती हैं। सभी यात्रियों के मुख पर एक विशेष सन्तोष तथा हर्ष दिखाई देता है। पहाड़ पर पहुँचकर सभी यात्री पूर्ण दिन नमाज़ आदि पढ़ने में व्यतीत करते हैं। कहा जाता है कि इसी पर्वत श्रेणी पर कुरान का इलहाम हुआ था। यहाँ सभी मुसलमान ऊँच-नीच का भेद भाव छोड़कर नमाज़ पढ़ते हैं। सन्ध्या समय सभी यात्री एक धार्मिक आनन्द का अनुभव करते हैं। फिर पर्वत के समीप ही एक स्थान पर वे सारी रात कुरान आदि पढ़ते हैं। जुलहिजा के दूसरे दिन प्रातःकाल ही वे मिना की वादी में पहुँच जाते हैं। प्रिय उपमन्यु, तुम शायद जुलहिजा को न समझ सके होगे। देखो जुलहिजा एक मुसलमानी महीने का नाम है। इसी महीना में हज की यात्रा की जाती है। मुसलमानी वर्ष चन्द्र मासों से गिना जाता है, इसीलिए एक मुसलिम वर्ष केवल ३५४ दिन का होता है। इस प्रकार तुम्हारी समझ में आ गया होगाकि अँगरे जी महीनों के अनुसार हज यात्रा भिन्न-भिन्न तिथियों तथा महीनों में प्रति वर्ष पड़ती है।

मिना की वादी में प्रत्येक यात्री किसी न किसी पशु का वलि-दान करता है। अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुसार कोई बकरी कोई ऊँटनी आदि की वलि देता है। इस वलि को चढ़ाने का उद्देश्य उस प्राचीन वलि के स्मरण से है जो इब्राहीम ने ईश्वर की आज्ञा से अपने बेटे इस्माइल के बदले में चढ़ाई थी। समीपीय बद्दू लोग वलि के लिए पशु बेचते हैं। उनको इससे बड़ी आय होती है। बलि के पशु का माँस पकाकर खाया जाता है और कुछ गरीवों में वितरित कर दिया जाता है। तदनन्तर हाजी लोगों के सिर के बालों का मुण्डन संस्कार होता है। नाखून भी काटे जाते हैं। केश और नाखून दोनों वहीं पर गाढ़ दिये जाते हैं। इस प्रकार हज की क्रिया समाप्त हो जाती है। यहाँ चित्र आदि लेने पर सरकार की ओर से प्रतिबन्ध लगे हैं। अरब के निर्मातः इब्न सऊद ने यहाँ पर काफी सुधार किये हैं। मिश्र की सरकार मक्का के मार्ग पर वृक्षारोपण तथा जल का प्रबन्ध करने की योजना बना रही है।

इस प्रकार अब्बाजान हज की यात्रा समाप्त कर लौटे। अब की बार मोटर द्वारा जद्दा लौटे। जब अब्बाजान मुझे मार्ग में अल्लादीन के नाम से पुकारते तो मैं भी उनसे हाजी जी कह देता तदनन्तर हम दोनों हँस जाते। भ्रमण करते हुए हम जुलाई के अन्त में घर आ पहुँचे। घर पर आते ही उन्होंने मेरा नाम बदल दिया। अब सभी लोग मुझसे 'मेरी मक्का की यात्रा' के विषय में पूछते हैं। मैं बड़ी रुचि के साथ उन्हें संक्षेप में बता देता हूँ। तुम्हारे लिए भी इस पत्र में मैंने संक्षिप्त वर्णन ही दिया है। मेरा विचार 'मेरी मक्का की यात्रा' के विषय में एक बड़े ग्रन्थ को लिखने का है। विस्तृत रूप से तुम मक्का की यात्रा के विषय में जभी पढ़ना।

तुम्हारा शुभेच्छु
राम

अष्टम पत्र

जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरोयसो

(माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़ कर हैं)

प्रिय उपमन्यु,

इस पत्र में मेरा विचार तुम्हें मातृभूमि की महिमा के विषय में कुछ ज्ञान कराना है। देखो विद्वानों का कथन कि 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' अर्थात् माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़ कर है, अक्षरशः सत्य है। माता की महिमा तथा आज्ञा सेवा आदि के विषय में मैं पहले उल्लेख कर चुका हूँ। इस पत्र में, मैं केवल मातृभूमि की भक्ति एवं सेवा के विषय में अपने विचार प्रकट करूँगा। देखो मातृभूमि के प्रेम की भावना प्रत्येक मानव में स्वभावतः ही है। पशु, पक्षी भी अपने स्थान से स्वाभाविक प्रेम करते हैं। जिस पावन वसुन्धरा ने हमें शरीर धारण कराया है, जिसकी रज में हम सानन्द खेल खेल कर बड़े हुए हैं, जिसके पावन जल और अन्न से हमारे शरीर का विकास हुआ है, उसके प्रति हमारा प्रेम होना स्वाभाविक है। मनुष्य को ही नहीं, पशु पक्षियों को भी अपनी भूमि से प्रेम होता है। यही नहीं विशेष प्रकार के पक्षी, कीट, वृक्ष, पौधे, पुष्प, विशेष प्रकार की भूमि में ही पाये जाते हैं। उदाहरण बम्बई के केले अलमोड़ा में उत्पन्न नहीं हो सकते हैं और न नागपुर के से शन्तरे देहली में। जो जहाँ उत्पन्न होता है, उसे वहाँ की जलवायु ही अनुकूल होती है। यदि कोई काश्मीर के अंगूरों को ब्रजभूमि में उत्पन्न करना चाहे तो यह

नितान्त असम्भव है। सारांश यह है कि देश भक्ति स्वाभाविक गुण है। जन्मभूमि का स्मरण सभी को व्याकुल बना देता है। भगवान कृष्ण द्वारका चले जाने पर गोकुल की मधुर स्मृतियों से व्याकुल हो जाते और अपने सखा उद्धव जी से कहते हैं:—

'ऊधो मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
हंस सुता की सुन्दर कगरी, अरु कुंजन की छांही।
वे सुरभी, वे बच्छ, दोहनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल बाल सब करत कोलाहल, नाचत गहि गहि बाहीं।

गोकुल के ग्वालाओं, गायों, बछड़ों, यमुना के कगारों तथा कुंज आदि की मधुर स्मृति श्रीकृष्ण जी को व्याकुल कर देती है। द्वारका के रत्नजटित सिंहासन पर बैठे हुए जहाँ उनकी सेवा के लिए अनेक सेवक हैं, कृष्ण जी को सुख नहीं। उन्हें तो अतीत के वे मधुर दिवस जब वे गायों के पीछे लकुटिया लेकर भागते थे, याद आते हैं। गोकुल में उन्हें स्वर्ग से भी बढ़कर आनन्द है। ठीक ही है जन्म भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है।

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम भी अपनी जन्म भूमि अयोध्या को स्वर्ग से भी अधिक श्रेष्ठ समझते हैं। देखिए उनके मुखारबिन्द से निकले शब्द कैसे मार्मिक हैं—

'जद्यपि सब बैकुण्ठ बखाना।
वेद पुरान विदित जग जाना॥
अवध सरिस प्रिय मोहिन सोऊ।
यह प्रसंग जानइ कोऊ कोऊ॥
अति प्रिय मोहि यहाँ के वासी।
मम धामदा पुरी सुख रासी॥'

जब भगवान राम के मत में बैकुण्ठ का सुख भी उनकी जन्म-भूमि के सुख के समान नहीं है तो फिर जन्म भूमि की

महिमा को कौन स्वीकार नहीं कर सकता है। जन्म भूमि का हमारे ऊपर अपार ऋण है। माता हमें जन्म धारण कराती है। परन्तु पृथ्वी माता वास्तव में हमें मनुष्य बनाती है। वह हमारे भोजन के लिए नाना प्रकार की वस्तुएँ देती है। उसका शीतल जल हमें शातलता प्रदान करता है। भारत माता के प्रति पण्डित रामनरेश त्रिपाठीजी ने कैसे सुन्दर भाव व्यक्त किये हैं:—

'जिस पर गिर कर उदर दरी से जन्म लिया था।
जिसका खा कर अन्न सुधा सम नीर पिया था।
जिससे हमको प्राप्त हुए, सुख साधन सारे।
जिस पर हुए समाप्त हमारे पूर्वज प्यारे।
वह पुण्य भूमि भारत मही, हम इसकी संतान हैं।
कर इसकी सेवा हृदय से पा सकते सम्मान हैं।

यदि गम्भीरतया विचार किया जाए तो वर्तमान काल में देशभक्ति की महत्ता सबको स्वीकृत करनी पड़ेगी। इस युग में देश भक्ति ही सबसे पावन एवं उच्च धर्म तथा श्रेष्ठ कर्तव्य है। देशभक्ति शब्द में माधुर्य कूट-कूट कर भरा है। इस शब्द के कथन मात्र से हमारी रसना पवित्र तथा हृदय आनन्द से प्लावित हो जाता है। महा पुरुषों ने भगवान भक्ति को ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य माना है। किन्तु आज के युग में मातृ भूमि की भक्ति ईश्वर भक्ति से श्रेष्ठतर है। मातृभूमि में ही प्राणी शरीर धारण करता है। मातृ भूमि की जलवायु में ही मनुष्य का शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक विकास होता है। अतएव हमारा सबसे पावन कर्तव्य यह है कि हम तन मन धन से जन्मभूमि के दुःखों को दूर करें। किसी ने ठीक ही कहा है:—

'जिस को न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं है, पशु निरा और मृतक समान है।'

अर्थात् जिस व्यक्ति के हृदय में अपनी मातृभूमि के लिए गौरव है, वही वास्तव में मनुष्य है।

जननी हमें शशवावस्था में गोद लेती है परन्तु हम जीवन पर्यन्त जन्मभूमि की गोद में पलते हैं। श्रीमन्न द्विवेदी जी ने जन्म-भूमि का कैसा गुणगान किया है। देखिए :—

'माता केवल बाल काल में, निज अंकन में धरती है।
हम अशक्त जब तलक, तभी तक पालन पोषण करती है।
मातृभमि करती है सबका, लालन सदा मृत्यु पर्यन्त।
जिसके दया प्रवाहों का नहिं होगा सपने में भी अन्त ॥'

जिस जन्मभूमि के उपकारों का अपार ऋण हमारे ऊपर है, उसे हम स्वर्ग से बढ़कर क्यों नहीं समझेंगे। इसीलिए तो देशभक्तों की अमर गाथाओं से विश्व का इतिहास भरा पड़ा है। भारत-वर्ष के देशभक्तों की यश की गाथाएँ विश्व के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं। महाराणा प्रताप की अक्षय कीर्ति का पावन संदेश, वायु अरावली पर्वत का स्पर्श कर दशो दिशाओं में फैला देती है। भामाशाह का अपूर्व त्याग विस्मरण के योग्य नहीं है। इतनी अतुल सम्पति को मातृभूमि के लिए सहर्ष दे देना और उसका तनिक भी विज्ञापन न करना देशभक्ति का जीता जागता उदाहरण है। अतएव यह स्वीकार करना पड़ेगा कि मातृभूमि के लिए सर्वस्व का बलिदान कर देना विशाल एवं उदार हृदय का द्योतक है। रंगून में निर्वासित बादशाह बहादुरशाह की क़ब्र देश प्रेम की अमर निधि है। महाराणी लक्ष्मीबाई का देश प्रेम की ज्वाला में हँसते-हँसते बलिदान कर देना देशभक्ति का अलौकिक उदाहरण है। वह घोड़े पर सवार थी। दत्तक पुत्र ढाल के आवरण से बँधा था चारों ओर से अँगरेज गोलियों की वर्षा कर रहे थे किन्तु महा-रानी अपने पथ से विचलित नहीं होती थी। हँसते-हँसते देशप्रेम में प्राण त्याग दिये। जन्मभूमि के लिए गोलियों की किंचित मात्र

भी परवा नहीं की। वह जानती थी कि शक्तिशाली अङ्गरेजों से उसको जीतना अत्यन्त कठिन ही नहीं वरन् नितान्त असम्भव था किन्तु मातृभूमि के लिए सर्वस्व बलिदान में ही वह विश्वास रखती थी। इसलिए उसने हँसते-हँसते अपने प्राण त्याग दिये। धन्य है ऐसी महारानी लक्ष्मीबाई को। यही कारण है कि हम आज बच्चे-बच्चे के मुख से यही कहते सुनते हैं।

'बुन्देले हर बोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मरदानी वह तो झाँसी वाली रानी थी॥'

कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन की सार्थकता देश सेवा करने में ही है। हमारी भारत वसुन्धरा में वीर शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह, नानासाहब, तातियाँ, बालगंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय, शहीद अमरसिंह, रासविहारी बोष, महात्मा गाँधी, सुभाषचन्द्र बोस, राजा महेन्द्रप्रताप, सरदार बल्लभ भाई पटेल, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, पट्टाभि सीतारमैया, जे० बी० कृपलानी, पण्डित विजयलक्ष्मी, स्वर्गीया सरोजिनी नायडू आदि के मातृभूमि के लिए किये गये बलिदान अमर हैं। इन सभी विभूतियों ने अपूर्व एवं अलौकिक त्याग से देश का मस्तक ऊँचा किया। शताब्दियों से पराधीनता की बेड़ी में जकड़े हुए भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त कराने का श्रेय ऐसे ही देशभक्तों को है। इसलिए प्रत्येक देशभक्ति की अभिलाषा जन्मभूमि के लिए पूर्ण बलिदान की होनी चाहिए। श्री माखनलाल चतुर्वेदी ने देशभक्ति की आन्तरिक अभिलाषा एवं कामना का कैसा अलौकिक चित्र अंकित किया है :—

"चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ।
चाह नहीं प्रेम माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ॥

चाह नहीं सम्राटों के सिर पर, हे हरि डाला जाऊँ।
चाह नहीं देवों के सिर पर चढ़ूँ, भाग्य पर इठलाऊँ॥
मुझे तोड़ लेना बनमाली, उस पथ से देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जाएँ वीर अनेक॥"

अतएव प्रत्येक मनुष्य का सबसे बड़ा धर्म मातृभूमि की तन, मन, धन से सेवा करना है। किसी ने ठीक ही कहा है :—

'जो भरा नहीं भावों से,
जिसमें बहती रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं, वह पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं॥'

अर्थात् स्वदेश प्रेम ही सच्चे मनुष्य की पहिचान है। शिक्षा का उद्देश्य भी केवल धन कमाना ही नहीं अपितु मातृभूमि की सेवा करना भी है। यदि किसी व्यक्ति ने उच्च शिक्षा प्राप्त करली और अतुल सम्पत्ति कमाली लेकिन अपने अशिक्षित भाइयों को शिक्षित नहीं बनाया, दीन भाइयों की सहायता नहीं की तो उसका जीवन निरर्थक है। शिक्षा तथा सम्पति का वास्तविक उद्देश्य तो देश अथवा मातृभूमि के कष्टों का निवारण करना है। किसी कवि का निम्नलिखित कथन अक्षरशः सत्य है :—

'पढ़ि कमाय कीन्हों कहा,
हरो न देश कलेश।'

प्रिय उपमन्यु, ऊपर की बातों से तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि मनुष्य जीवन में देशभक्ति सबसे पावनतम कर्तव्य है। मातृभूमि की सेवा ही आज के युग का सबसे बड़ा धर्म है। अब देखो हमारी मातृभूमि भारत वसुन्धरा की कीर्ति तो समूची सृष्टि में व्याप्त है। कवियों की ओजस्वनी वाणी हमें क्या बताती है।

'जग बिच स्वर्ग हमारो देश'

भारत अस नाम शुभ नाम लेत छन, उपजत प्रेम विशेष।
तापैं जन्म भूमि शोभा लखि, रहत न दुख लवलेश॥
पग तर उदधि रहत शिर ऊपर, नील - छत्र - स - दिनेश।
उत्तम हिम गिरि परम मनोहर, जहँ नित रमत महेश॥
पावन निर्मल गंग नीर जेहि, परहत कटत, कलेश।
प्रकटे ब्रह्म रूप जग कारक, जहँ ब्रजेश अवधेश॥
धर्म ध्वजा फहरात जहाँ नभ, रत्ननि खानि अशेष।
'माधव' अस लखात कतहूँ नहिं, जस मम भारत देश॥

—माधव

यही नहीं उर्दू भाषा के महान् कवि डाक्टर इकबाल ने भारत-वर्ष को संसार में तिलक माना है। देखिए—

'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा।'

विष्णु पुराण में भी भारत की महिमा का अलौकिक गुणगान किया है :—

'गायंति देवाः किम गीतकानि
धन्यास्तु ते भारत-भूमि भागे।
स्वर्गापवर्गास्पद हेतु भूते,
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वाह।'

अर्थात्—देवता लोग स्वर्ग में गीत गाते हैं कि वे लोग धन्य हैं जिन्होंने भारत वसुन्धरा में जन्म लिया। भारत वसुन्धरा स्वर्ग से भी अधिक सुन्दर है। कारण वहाँ स्वर्ग और मोक्ष दोनों की साधना की जा सकती है। जो देवत्व का आनन्द उठा लेते हैं, वे ही भारत में पुनर्जन्म लेते हैं और यहाँ के आदर्श के कारण वे मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

अतः उपमन्यु अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि हमारा भारतवर्ष सृष्टि के सभी भूखण्डों से सुन्दर है। आकाश गंगा से

निर्मल यहाँ की निर्मल सरिताएँ हैं। नन्दन वन से अधिक शोभा सम्पन्न यहाँ के वन हैं। क्रम क्रम से आने वाली यहाँ की छः ऋतुओं का सौन्दर्य सृष्टि के किसी अन्य भूखण्ड में नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारा भारतवर्ष अत्यन्त भव्य और सुन्दर देश है। मातृभूमि की सेवा करना हमारा परम कर्तव्य है। जब हमने ऐसे सुन्दर देश में जन्म लिया है तो हमें अपने को अधिक भाग्यशाली समझते हुए भारत भूमि की सेवा करनी चाहिए। किसी महापुरुष का कथन कि--

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'

अर्थात् 'माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी अधिक श्रेष्ठ है' यह अक्षरशः ध्यान में रख कर तुम देश भक्त बनो। हमारा नवार्जित स्वतन्त्रता उसी अवस्था में चिरस्थायी रह सकती है जब हम सभी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए तन, मन, धन बलिदान करने के लिए तैयार रहें।

तुम्हारा शुभेच्छु
राम

नवम पत्र

हमारे दो कर्णधार

प्रिय उपमन्यु,

तुम जानते हो कि हमारे देश की स्वतन्त्रता अभी नवार्जित है। इस स्वतन्त्रता को स्थायी बनाने के लिए त्याग और बलिदान की आवश्यकता है, जितने त्याग और बलिदान से स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, उससे कहीं अधिक। तुम्हें ज्ञात होना चाहिए कि आज हमारे भारत पर एक दम कुछ संकट आ पड़े हैं। अन्न का अभाव, वस्तुओं के मूल्य की वृद्धि, वस्त्र का अभाव आदि। ये संकट केवल हमारे देश में ही नहीं वरन् सारे विश्व में हैं। इसके अतिरिक्त स्वतन्त्रता के आगमन के साथ-साथ हमारे देश में अनेक राजनैतिक संघ बन गये हैं। ये सभी संघ लोकप्रिय काँग्रेस सरकार को शक्तिहीन बनाने के प्रयत्न में हैं। इस प्रकार भारत की नौका अब मँझधार में है। हमारी कई एक त्यागी और उदार आत्माएँ स्वतन्त्रता प्राप्त करने के बाद के इन तीन चार वर्षों में हमें असहाय छोड़ देवलोक को प्रस्थान कर चुकी हैं। अतः आज हमारा देश संकट में है। आज हमारे सच्चे, त्यागी, विद्वान, तथा दूरदर्शी कर्णधार केवल दो ही हैं—"राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद" जी और प्रधानमन्त्री पण्डित "जवाहरलाल नेहरू"। दोनों मातृभूमि के सच्चे सेवक, आदर्श नेता तथा बापू के के प्रिय अनुयायी हैं। दोनों ही राजनीति के गगन में दो नवेन्दुओं की भाँति प्रकाशित हैं। दोनों के अपूर्व बलिदान से भारतीय इतिहास गौरव प्राप्त कर रहा है। दोनों की तपस्याओं का यशगान गाकर

प्रातःकालीन शीतल मन्द सुगन्धित वायु अपने भाग्य पर इठलाती है। इस पत्र में मेरा विचार इन्ही दो महारथियों के जीवन आदि से तुम्हें परिचित कराना है।

राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद

डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद का जन्म बिहार प्रान्त के सारन नामक जिले में ३ दिसम्बर सन् १८८४ ई० को एक कायस्थ परिवार में हुआ था। कौन जानता था कि एक छोटे से गाँव में जन्म लेने वाला राजेन्द्र एक दिन डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद हो, राष्ट्रपति के पद पर सुशोभित होगा। इनके बाबा दो भाई थे श्री चौधुर लाल और श्री मिश्रीलाल। श्री मिश्रीलाल जी का युवावस्था में ही स्वर्गवास हो गया था। उन्होंने महादेव नाम का एक पुत्र छोड़ा था। हमारे राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी के श्री महादेव सहाय ही पिता थे। श्री चौधुरलाल हथुआ राज्य में दीवान थे। उन्होंने पर्याप्त सम्पत्ति तथा कीर्ति अर्जित की थी। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी के पिता श्री महादेवसहाय जी को पहलवानी बागवानी और वैद्यक से अधिक रुचि थी। राजेन्द्र बाबू ने बचपन में ही अपने पिता से मुगदर घुमाना तथा घोड़े की सवारी करना सीखा था। राजेन्द्र बाबू ने बचपन में ग्रामीण बच्चों के साथ, कबड्डी, चक्का, दोल्हापाती आदि ग्रामीण खेल खेले थे। माता और दादी इन्हें अधिक प्रेम करती थीं। ये पाँच भाई बहिन थे। शीघ्र रात को सोना तथा शीघ्र प्रातःकाल जगने का राजेन्द्र बाबू जी का प्रारम्भ से ही स्वभाव था। इनकी बड़ी बहिन भगवती देवी का इन पर प्रारम्भ से प्रभाव था।

राजेन्द्र बाबू के विद्याध्ययन का आरम्भ भारतीय परिपाटी के अनुसार छटवें वर्ष में हुआ। उस समय उर्दू राजभाषा थी। इसलिए राजेन्द्र बाबू की शिक्षा का श्री गणेश प्रचलित प्रथा के

अनुसार मौलवी साहब द्वारा 'बिसमिल्लाह' के साथ हुआ। शीरनी बाँटी गयी। मौलवी साहब एक विचित्र आदमी थे। वह संसार की प्रत्येक वस्तु के विषय में ज्ञान रखने का दावा रखते थे। राजेन्द्र बाबू ग्राम्य जीवन में अति आनन्द लेते थे। रामायण पाठ से उन्हें अत्यन्त प्रेम था। गाँव में कोई पाठशाला न थी। अतएव छपरा के विद्यालय में पढ़ने के लिए राजेन्द्र बाबू को भेजा गया। वहीं उन्होंने A, B, C और नागरी अक्षर अ, आ, इ, ई के साथ पढ़ना प्रारम्भ किया। वार्षिक परीक्षा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। अतः दो कक्षा एक दम चढ़ाकर दूसरी वर्ष छटवीं कक्षा में कर दिये गये। तदनन्तर आप अपने बड़े भाई के साथ पटना भेज दिये गये। वहीं राजेन्द्र बाबू ने चौथी और पाँचवीं कक्षाएँ पास की। पाँचवी कक्षा में ही बलिया ज़िला के दलन छपरा गाँव के एक मुख्तार साहब की पुत्री से राजेन्द्र बाबू का विवाह हो गया। १३ वर्ष की अवस्था में विवाह के एक वर्ष उपरान्त द्विरागमन भी हो गया। तदनन्तर राजेंद्र बाबू की शिक्षा हथुआ और छपरा में हुई। छपरा के स्कूल से ही इन्होंने एन्ट्रेंस की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की।

आगे अध्ययन के लिए राजेन्द्र बाबू कलकत्ता गये। प्रेसीडेन्सी कालिज में प्रवेश किया। वहीं से एफ० ए० में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। अँगरेजी, फारसी और तर्कशास्त्र में विशेष योग्यता प्राप्त की। तदनन्तर बी० ए० में प्रवेश किया। वहीं से एम० ए० और बी० एल (वकालत) की परीक्षाएँ पास की। तुम यह सुनकर आश्चर्य करोगे कि राजेन्द्र बाबू अपनी विद्यार्थी अवस्था में किसी विदेशी वस्तु के प्रयोग न करने की प्रतिज्ञा कर चुके थे। अतएव जब वह विश्व विद्यालय में पढ़ने जाते तो कलम दवात अपने साथ लिखने के लिए ले जाते थे।

एम० ए० पास करने के पश्चात् राजेन्द्र बाबू का विचार आई० सी० एस पास करने का था किन्तु पिताजी की आकस्मिक मृत्यु के कारण उन्हें यह विचार छोड़ना पड़ा। एक वर्ष तक आप मुजफ्फरपुर कालिज में प्रोफेसर रहे। तदनन्तर भाई की आज्ञा के अनुसार कलकत्ता चले गये। वहीं खान बहादुर सैयद समसुल हुदा के साथ वकालत की दीक्षा लेने लगे। सन १६११ ई० में आपने वकालत आरम्भ करदी। तदनन्तर सन १६१६ ई० में पटना हाईकोर्ट की स्थापना हुई। अतः राजेन्द्र बाबू ने भी पटना जाकर वकालत आरम्भ करदी।

राजेन्द्र बाबू को राजनीति के क्षेत्र में आरम्भ से ही रुचि थी। सन् १६०५ ई० में जब बंग-भंग आन्दोलन आरम्भ हुआ तो राजेन्द्र बाबू सभी बंग-भंग विरोधी सभाओं में सम्मिलित होते थे। वहीं उन्होंने स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग तथा विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के लिए प्रण किया। कालेज जीवन में ही राजेन्द्र बाबू ने बिहारी क्लब की स्थापना की। इस संस्था का उद्देश्य विद्यार्थियों के चरित्र को सुधारने और उन्हें देश की बातों में रुचि लेने का था। कालेज में यूनियन की ओर से प्रकाशित मासिक पत्र का भी संचालन किया। सन् १६०६ ई० में काँग्रेस के अधिवेशन में वह स्वयं सेवक के रूप में सम्मिलित हुए। तदनन्तर 'विहार छात्र सम्मेलन' की स्थापना की, तदनन्तर प्रातः स्मरणीय श्री गोखले जी के कहने से भारतीय सेवा समिति में सम्मिलित होने का विचार किया किन्तु बड़ी बहिन के विरोध और भाई साहब की अनिच्छा से राजेन्द्र बाबू का विचार पूर्ण न हो सका। चम्पारन के किसानों के हेतु जेलखाने के लिए उद्यत पूज्य बापू को देखकर राजेन्द्र बाबू की भावनाएँ उमड़ पड़ीं। वह तुरन्त ही जेल की यातनाओं को सहने के लिए तैयार हो गये। चम्पारन के पश्चात् खेड़ा के आन्दोलन में आपने पूज्य बापू जी के चरण-

चिन्हों का अनुसरण किया। उसी समय आप स्वर्गीय सरदार पटेल के सम्पर्क में आये। असहयोग आन्दोलन के छिड़ने पर आपने वकालत छोड़ दी। जभी से आप काँग्रेस में सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। अनेक बार जेल गये। सन् १९३४ ई० में विहार के भूकम्प के समय आपने पीड़ितों को बड़ी सहायता की। फलतः आपका यश सर्वत्र फैल गया। इसी सेवा के फलस्वरूप आप बम्बई के काँग्रेस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये। तदनन्तर त्रिपुरी काँग्रेस में जब सुभाष बाबू ने त्याग पत्र दे दिया तो आप ही अध्यक्ष रहे। श्री कृपलानी जी के त्याग पत्र देने पर फिर राजेन्द्र बाबू पर ही अध्यक्षता का भार आ पड़ा। नागपुर के अधिवेशन में आप हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति रहे। भारतीय विधान का हिन्दी अनुवाद २६ जनवरी सन् ५० ई० पूर्व आपके ही अथक और अनवरत परिश्रम से हुआ। २ सितम्बर सन् १९४६ ई० की अन्तरिम सरकार में आपने खाद्यमन्त्री का कार्य किया। विधान के निर्माण का कार्य आपकी अध्यक्षता में ही हुआ तथा शष्ट्रपति होकर उसके संचालन का कार्य भी आप जैसे कर्तव्यनिष्ट, प्रतिभा सम्पन्न एवं दृढ़ नायक को प्राप्त हुआ है।

हमारे राष्ट्रपति की दिनचर्या आदर्श है। आप नियम पूर्वक तीन बजे प्रातःकाल उठते हैं। उठकर आध घण्टे तक मौन प्रार्थना करते हैं। फिर लिखने तथा पढ़ने आदि का कार्य करते हैं। यह कार्य आपका सूर्योदय तक चलता है। तदनन्दतर स्नान आदि कर के गीता आश्रम, भजनावलि तथा वेद पाठ आध घन्टे तक करते हैं। धार्मिक पुस्तकों में आपका अखण्ड विश्वास है। अस्वस्थ पड़ने पर आप पण्डितों द्वारा गीता तथा रामायण का पाठ कराते हैं। संक्षेप में आप हार्दिक तपस्या, कठोर संयम, सचाई एवं साधुता के सजीव स्वरूप से साधु हो गये हैं।

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने एक बार आपके विषय में लिखा था :— 'महात्मा गाँधी और राजेन्द्र बाबू हमारे नेता हैं। मैं इनके बिना जीवित नहीं रह सकता। मतभेद होते हुए भी मैं उन्हें बड़ी श्रद्धा से देखता हूँ।' महामान्य मदनमोहन मालवीयजी ने आपके विषय में कहा था :—

'राजेन्द्र बाबू जैसा धीर, वीर, गंभीर नेता कोई दूसरा नहीं।' चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य ने लिखा है : -

'यदि समस्त भारत में इस समय ऐसा कोई नेता है जिसको श्रेष्ठ पुरुष समझ कर हम उसके प्रति श्रद्धा करते हैं, वह राजेन्द्र बाबू हैं।'

जान गुन्थर ने अपनी पुस्तक 'इनसाइड इण्डिया' में लिखा है कि 'महात्माजी के पश्चात् उनके अनुयायियों में भारतीय कांग्रेस के सरदार पटेल लोह मुष्टिका हैं तो राजेन्द्र बाबू निश्चय ही उसके हृदय और मस्तिष्क हैं।'

सर सी० बी० रमन ने आपको 'सत्य और अहिंसा का दूत' बताया है। फ्रान्स के समाचार पत्र 'इयाक' ने राजेन्द्र बाबू को 'एक आश्चर्यजनक संगठन कर्त्ता, मानवीय सद्गुणों से परिपूर्ण हृदय वाला एक महान्-पुरुष, महात्मा गाँधी का सबसे विश्वस्त-नीय अनुयायी, भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का अग्रगण्य सैनिक घोषित किया है।'

भारतीय गण राज्य के प्रथम राष्ट्रपति होने का श्रेय आपको ही है। ईश्वर करे, आप इस पद को जीवन पर्यन्त सुशोभित करते रहें, यही हमारी शुभ कामनाएं हैं।

अतः उपमन्यु, अब तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि राष्ट्र-पति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद हमारे तपे हुए कर्णधार हैं। आज देश में उनका सर्वोच्च स्थान है। इनके पश्चात् हमारे देश के सच्चे कर्णधार पण्डित जवाहरलाल नेहरू हैं। आगे मैं उन्हीं के जीवन

पर प्रकाश डालूँगा। उनका जीवन भी त्याग और तपस्या का जीवन है। विश्व के कोने-कोने में आज पण्डित जवाहरलाल नेहरू की कीर्ति के गान हो रहे हैं। भूमण्डल के समस्त राष्ट्र आज उनके मुखारविन्द से निकले हुए शब्दों को सुनने की प्रतीक्षा करते हैं।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

मातृभूमि के सच्चे सपूत, अलौकिक सेनानी, नव भारत के निर्माता पण्डित जवाहरलाल नेहरू का जन्म माघ कृष्णा सप्तमी संवत् १९४६ विक्रमी तदनुसार १४ नवम्बर सन १८८९ ईसाब्द को हुआ। सम्पन्न कुटम्ब में जन्म लेने के कारण लालन-पालन के सर्वश्रेष्ठ साधन आपको प्राप्त हुए। आपके पिताजी पण्डित मोतीलाल नेहरू अपने समय के महानतम कानून विशेषज्ञ समझे जाते थे। जब उन्होंने अंगरेजी सैनिकों द्वारा जलियाना बाग में निहत्थे भारतीय पुरुषों, स्त्रियों तथा बच्चों पर मशीनगनों द्वारा गोलियाँ बरसते देखीं, तो राजनैतिक क्षेत्र की ओर मुड़ गये। अतः पण्डित जवाहरलाल नेहरू में देश सेवा परम्परागत है।

पण्डित जी की शिक्षा १२ वर्ष की अवस्था तक घर पर ही हुई। इस शिक्षा में श्री बुक्स जैसे शिक्षा शास्त्रियों का हाथ था। सन् १९०४ ई० में पण्डित मोतीलाल नेहरू सपरिवार इङ्गलैण्ड गये। वहीं पण्डित जवाहरलाल ने प्रसिद्ध विद्यालय हैरो में प्रवेश किया। तदनन्तर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के ट्रिनिटी कालेज से सन् १९०९ ई० में बी० ए० की परीक्षा पास की। वहीं से एम. ए. आनर्स की उपाधि प्राप्त की। सन् १९११ ई० में बैरिस्ट्री पास की। तदनन्तर आप भारत लौटे।

पण्डित जी की वकालत की ओर विशेष रुचि नहीं थी। सन् १९१६ ई० में बसन्त पञ्चमी को आपका विवाह हो गया। सन्

१६१७ ई० में पुत्री का जन्म हुआ। श्रीमती एनीबीसेण्ट और श्री गोपालकृष्ण गोखले द्वारा संचालित 'होमरूललीग' की ओर आप अधिक आकर्षित हुये। नेहरू जी ने मातृभूमि की सेवा करने का दृढ़ संकल्प कर लिया। सन १६२१ ई० में आप असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े। 'विदेशी वस्त्र के बहिष्कार' के आन्दोलन में आपको सन १६२२ ई० में १८ मास का कठोर कारावास मिला। सन १६२७ ई० में भारतीय काँग्रेस के प्रतिनिधि बन कर आप जनेवा के साम्राज्य विरोधी संघ के अधिवेशन में सम्मिलित हुए। आप उग्रनीति के पक्षपाती थे। सन १६२६ ई० में आपको लाहौर काँग्रेस का सभापति निर्वाचित किया गया। नेहरू जी की अध्यक्षता में अर्धरात्रि के समय पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हुआ। रावी नदी के तट पर २६ जनवरी को पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने की प्रतिज्ञा की गयी। उसी प्रतिज्ञा के आधार पर हमारे यहाँ स्वतन्त्रता मिलने पर २६ जनवरी से ही प्रजातन्त्र युग का श्री गणेश किया गया है।

सन १६३० ईसाब्द से सन् १६४५ ईसाब्द तक मातृभूमि की सेवा के उपलक्ष में पण्डित जी को कई बार जेल की यातनाएँ सहनी पड़ी हैं। तीन बार आप काँग्रेस के सभापति चुने गये हैं। जेल जीवन में ही आपने 'अपनी आत्मकथा' और 'भारत की खोज' जैसी महान् पुस्तकें लिखी हैं। आपकी आत्मकथा में यदि एक ओर हमें आपके जीवन की दिव्य एवं पावन झाँकी होती है तो दूसरी ओर हमें उत्कृष्ट काव्य प्रतिभा की सुन्दर छटा अवलोकित होती है। उच्चकोटि के गद्य लेखक होने के साथ-साथ आप भाषण-कला में अत्यन्त पटु हैं। श्रोतागणों को अविलम्ब रूप से अपनी सरस, मधुर एवं प्रभावशाली शैली द्वारा अपनी ओर कर लेना आपके बाएँ हाथ का खेल है।

पण्डितजी का जीवन ठोस एवं क्रियात्मक जीवन रहा है। किसानों की टूटी-फूटी चारपाइयों पर रूखी-सूखी रोटी खाकर देश प्रेम जाग्रत करना नेहरू जैसे व्यक्ति का ही कार्य है। इसीलिए वह कृषक, श्रमिक तथा दीन वर्ग के अति प्रिय हैं। उनके कुटुम्ब की सेवाएँ भारतीय इतिहास में अमर रहेंगी। पिता देशभक्त रहे। स्त्री कमला नेहरू यद्यपि अति सुकुमार थीं, फिर भी पृथ्वी पर लेट लेट कर 'विदेशी वस्त्र बहिष्कार' आन्दोलन किया। उनकी बहिन विजयलक्ष्मी तो आधुनिक काल की एक स्त्री रत्न है। भारत में सम्भवतया ऐसा कुटम्ब विरला ही होगा जिसने इस प्रकार अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया हो।

सन् १९४७ ई० में देश को स्वतन्त्रता मिली। पण्डितजी प्रधान मन्त्री हुए। विदेश ज्ञान में पण्डितजी पूर्ण पण्डित हैं। उन्हें रात-दिन देश के उद्धार की चिन्ता है। वह रात भर बैठे कार्य करते रहते हैं। देश कल्याण ही उनकी अनन्त साधना है। देश चिन्ता ही उनके लिए महानतम चिन्ता है। वह अत्यन्त निर्भीक तथा परिश्रमी हैं।

आज उन्हें काँग्रेस में शिथिलिता दिखाई देती है। इसीलिए उन्होंने काँग्रेस की बाग डोर अपने हाथ में लेली। आज राज्य में प्रत्येक कार्य उनके परामर्श बिना नहीं होता है। पण्डित जो भारत की काया पलटने के पक्ष में हैं। हिन्दू कोड बिल पास कर वह हिन्दुओं में युगानुकूल जाग्रति देखना चाहते हैं। सक्षेप में नेहरूजी सुयोग्य पिता के सुयोग्य पुत्र, मातृभूमि के लाड़ले सपूत, देश निर्माता, यती पुरुष हैं।

अतः उपमन्यु, अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू आज भारत के महान् नेता हैं। पूज्य बापूजी ने नेहरू जी के सम्बन्ध में निम्नलिखित शब्द कहे थे :—

'बहादुरी में कोई उनसे आगे जा नहीं सकता और देश प्रेम में उनसे आगे कौन जा सकता है ?··· वह स्फटिक मणि की भाँति पवित्र हैं' उनकी सत्यशीलता सन्देह के परे है। वह अहिंसक और अनिन्दनीय योद्धा हैं। राष्ट्र उनके हाथ में सुरक्षित है।'

हमारी मंगल कामना है कि पण्डितजी महश्रजीवी हों।

तुम्हारा शुभेच्छु
राम

———

दशम पत्र—

बापू की एक सीख

(हाँ को हाँ और नहीं को नहीं समझो)

प्रिय उपमन्यु

तुम जानते हो, हमारा आर्यावत सृष्टि के आदि से ही एक गौरवशाली भूखण्ड रहा है। इस पुण्यमयी गौरवशालिन वसुन्धरा ने ऐसे देव तुल्य नर रत्नों को जन्म दिया है कि जिसको कीर्ति एवं यश की गाथाएँ आज भी हमारे मस्तक को अखिल विश्व के समक्ष ऊँचा किये हुए हैं। भगवान राम, भगवान कृष्ण आदि तो अवतार रूप में माने जाते हैं ही। आधुनिक युग के सबसे महान पुरुष, भारत के निर्माता हमारे बापू, महात्मा गाँधी का नाम भी भगवान् राम तथा भगवान कृष्ण के साथ-साथ अमर रहेगा। वह तो विश्व-कल्याण का संदेश लेकर यहाँ अवतीर्ण हुए थे। उनकी शिक्षाएँ अनुपम थीं। इस पत्र में मेरा विचार उनकी एक सीख के विषय में ही उल्लेख करना है। उनका कहना था कि 'हाँ को हाँ और नहीं को नहीं समझो।'

उपमन्यु तुम जानते हो उपर्युक्त शिक्षा देखने में अत्यन्त साधारण सी प्रतीत होती है किन्तु इसका महत्व विश्व-कल्याण के लिए संजीवनी बूटी है। यदि आज समाज के सभी व्यक्ति तथा विश्व के सभी राष्ट्र केवल बापू की इस एक शिक्षा के अनुयायी हो जाएँ तो संसार से सभी झगड़े, अन्याय, अत्याचार आदि समस्त दूर हो जाएँ। आज प्रत्येक समाज में शिथिलता आदि के लक्षण क्यों दिखाई देते है? क्या कारण है आज

न्यायालयों में सहस्रों अभियोग असत्यता आदि के चलते हैं ? केवल एक मात्र कारण—बापू की अनुपम सीख 'हाँ को हाँ और नहीं को नहीं समझो' का पालन न करना।

उपर्युक्त शिक्षा में, सत्यता, वचन-पालन, प्रतिज्ञा-पालन, चित्त की स्थिरता, दृढ़ता आदि गुण छिपे हैं। दूसरे शब्दों में इस शिक्षा का पालन करना सत्यता, वचन-पालन, चित्त की स्थिरता तथा दृढ़ता आदि गुणों का पालन करना है। यदि गम्भीरतया विचार किया जाय तो समाज में सारे झगड़े इसी शिक्षा के पालन न करने से होते हैं। यदि एक मित्र आज हमसे हमारी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए कुछ रुपया देने का वचन दे देते हैं और जब आवश्यकता के समय हम उनसे रुपया माँगने जाएँ तो वह रुपया नहीं देते हैं, तो हम वस्तुतः उनको झूठा समझने लगेंगे। यही नहीं हमारे और उनके सम्बन्ध ही उसी समय से टूट जाएंगे। हम भी भविष्य में उन्हें किसी कार्य में किसी प्रकार की सहायता न देने के लिए संकल्प कर लेंगे। फलतः हममें तथा उनमें ईर्षा के भाव उत्पन्न हो जाएंगे। आज स्वामी तथा सेवक, दूकानदार तथा ग्राहक, आदि में झगड़े इसीलिए होते हैं कि दोनों में कोई न कोई वचन का पालन नहीं करते हैं। धोबी से हम रुष्ट क्यों हो जाते हैं। इसका एक मात्र कारण यह है कि हमने उससे अमुक दिन कपड़े देने के लिए कह दिया था। उत्तर में उसने 'हाँ' कहा था किन्तु उस दिन वह लाया नहीं। उसने 'हाँ' को 'हाँ' नहीं समझा। इसीलिए हम उसको फटकारते हैं। इसी प्रकार दूध वाले से हम क्रोधित हो जाते हैं। कारण केवल यही कि दूध वाले से जब हमने प्रारम्भ में कहा था कि तुम को शुद्ध दूध देना पड़ेगा। तुम दूध में पानी तो नहीं मिलाओगे। उस समय दूध वाले ने उत्तर दिया था कि 'नहीं' दूध में पानी नहीं मिलाया जायगा। किन्तु उसने 'नहीं' को 'नहीं' नहीं समझा। इसलिए हम

दूधवाले पर उसके बचन न पालने के लिए रुष्ट होते हैं। तुम नित्य ही कक्षा में कुछ विद्यार्थियों से अध्यापक जी को रुष्ट होते देखते होंगे। इसका कारण तुम से पूछा जाए, तो तुम यही उत्तर दोगे कि वह अध्यापक जी का दिया हुआ कार्य करके नहीं लाते हैं। इसका क्या अर्थ है? देखो अध्यापक जी कक्षा के सभी विद्यार्थियों से घर पर कुछ प्रश्न करने के लिए कहते हैं। विद्यार्थी भी सभी एक स्वर में 'हाँ' कह देते हैं। अर्थात् वे प्रश्न दूसरे दिन अवश्य करके लाएंगे। किन्तु घर जाकर विद्यार्थी प्रश्न करने की सोचते भी नहीं। वह कक्षा में अध्यापक जी के समक्ष कही हुई 'हाँ' को 'हाँ' नहीं समझते हैं। कहने का तत्पर्य यह है कि कहे हुए वचनों के अनुसार वे कार्य नहीं करते हैं। अतएव अब तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि हमारे समाज में नित्य छोटे-छोटे झगड़े 'हाँ' को हाँ और नहीं को नहीं; न समझने से होते हैं। उदाहरण के लिए तुम खाना खा रहे हो, तुमने नौकर से जल लाने की आज्ञा दी है। नौकर 'हाँ' कहकर अर्थात्, अभी लाने की कहकर कहीं बाहर चला गया। लौटने पर जब वह तुम्हारे सामने आयगा, तुम तुरन्त उस पर क्रोध के आवेग में फटकारने के लिए टूट पड़ोगे। ऐसा क्यों? क्योंकि नौकर ने 'हाँ' को 'हाँ' नहीं समझा।

यही दशा राष्ट्रों की है। राजनीति में असत्य बोलने को नीति में गिना जाता है किन्तु ऐसा सोचना उचित नहीं। क्योंकि सत्य की सदा जय होती है। विश्व इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिल सकते हैं। कि असत्य के आश्रय से उन्नति करने वाले राष्ट्र पतन के गहरे गर्त में गिर पड़े। एक दिन असत्यवादी व्यक्ति तथा राष्ट्र की कलई अवश्य खुलती है। फलतः दूसरे उसका विश्वास नहीं करते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि

बापू की इस छोटी सी सीख में सत्य-पालन का मुख्य उद्देश्य है। वस्तुतः बापू सत्य और अहिंसा के अवतार ही थे। उनकी इस शिक्षा का पालन करने के लिए सत्य के गुण को अपनाना अति आवश्यक है।

प्रिय उपमन्यु सत्य सबसे महान् तप है। वेद के अनुसार पृथ्वी सत्य पर ही टिकी है और आकाश भी सत्य पर ही टिका है। सत्य ही ब्रह्म है। महाभारत में सत्य की महिमा का बड़ा गुणगान किया है। जो सत्य है वह धर्म है। जो धर्म है, वह प्रकाश है। जो प्रकाश है, वह सुख है। सत्य ही ज्ञान का स्रोत है। जिस व्यक्ति के हृदय में सत्य का वास है, उसी हृदय में भगवान् निवास करते हैं। किसी कवि ने ठीक ही कहा है :—

साँच बराबर तप नहीं, झूंठ बराबर पाप।
जाके हृदय साँच है, ताके हृदय आप।

सत्य की परिभाषा नितान्त साधारण है। ज्यों का त्यों यथार्थ रूप में कहना ही सत्य है। जो यथार्थ नहीं, उसे कहना असत्य का साधारण रूप है। आडम्बर, चाटुकारी, निन्दा, प्रलोभन आदि असत्य के ही स्वरूप हैं। सत्य बोलने से मनुष्य को सबसे बड़ा धन जो मिलता है, वह है विश्वास। इस अनमोल धन को प्राप्त कर मनुष्य को और कोई धन प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रह जाती। राजा हरिश्चन्द्र का नाम आज भी अमर है। क्यों? उत्तर सत्यवादिता के कारण। उनका सिद्धान्त था कि 'हाँ को हाँ और नहीं को नहीं समझो।' संसार में कोई भी शक्ति उनको सत्य से डिगा नहीं सकती थी। किसी कवि ने उनके विषय में कहा है :—

'चन्द्र टरे, सूरज टरे टरे जगत व्यवहार।
पै दृढ़ व्रत हरिश्चन्द्र को टरे न सत्य विचार॥'

प्रिय उपमन्यु संक्षेप में, मैं तुमको बताऊंगा कि किस प्रकार राजा हरिश्चन्द्र ने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भी

अपने वचनों का पालन किया। देखो! महाराज हरिश्चन्द्र इक्ष्वाकु वंश के प्रतापी राजा थे। वह धर्म और सत्य में विश्वास रखते थे। उनकी स्त्री शैव्या भी सत्य में अति विश्वास रखती थी। राजा की कीर्ति यत्र, तत्र, सर्वत्र फैली थी। किन्तु पुत्र के अभाव से राजा और रानी दुःखी एवं उदास रहते थे। अन्त में महाराज वरुण की पूजा करने से राजा को पुत्र का वरदान मिला। किन्तु इस शर्त पर कि उस पुत्र का बलिदान वरुणदेव को ही करना पड़ेगा। राजा रानी ने यह शर्त स्वीकार कर ली। कुछ काल के पश्चात् उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम रोहित कुमार रक्खा गया। जब राजा ने अपने प्रिय पुत्र की बलि वरुणदेव को नहीं दी, तो वरुण-देव ने राजा को शाप दिया। फलतः राजा जलोदर के रोग से पीड़ित रहने लगे।

अन्त में राजा ने अपने पुत्र का बलिदान करने का संकल्प कर लिया। निश्चित दिन से पूर्व ही नारद जी रोहित को चुरा ले गये। वरुणदेव का बलिदान नहीं किया जा सका, राजा का रोग बढ़ता गया। अन्त में राजा ने अतुल सम्पत्ति के बदले में एक ब्राह्मण का पुत्र खरीद कर बलिदान देना चाहा। यज्ञ किया गया। विश्वा-मित्र जी होता बने।

विश्वामित्र जी को उस लड़के की बलि पर दया आई। उन्होंने उस लड़के से कहा कि वह अग्नि की पूजा करे। अग्नि की स्तुति करने से उस बालक के भी प्राण बच गये, साथ ही राजा का भी रोग चला गया। महाराज पूर्ण स्वस्थ हो गये। उनका खोया हुआ लड़का भी मिल गया।

तदनन्तर राजा ने राजसूय यज्ञ करने का विचार किया। इस यज्ञ में होता वशिष्ठ जी बने। यज्ञ के समाप्त होने पर राजा ने ब्राह्मणों को बड़े-बड़े दान दिये। जब मार्ग में वशिष्ठ जी अतुल

धन लेकर जा रहे थे, तो विश्वामित्र जी मिल गये। जब विश्वामित्र जी को यह ज्ञात हुआ कि राजा ने उन्हें होता नहीं बनाया तो वह अत्यन्त क्रुद्ध हुए। उन्होंने सत्य हरिश्चन्द्रजी को असत्यवादी सिद्ध करने का बीड़ा उठा लिया। इस कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए विश्वामित्र जी ने तपस्या करना प्रारम्भ कर दी। उन्होंने राजा हरिश्चन्द्र के राज्य में उपद्रव करने के लिए कई जीव उत्पन्न किये किन्तु राजा हरिश्चन्द्र के सत्य के प्रभाव से वे कुछ न बिगाड़ सके। विश्वामित्र जी ने दो स्त्रियाँ भी राजा के पास विवाह करने के लिए भेजीं किन्तु उनको भी राजा ने फटकार दिया। अन्त में राजा के पास विश्वामित्र जी स्वयं ब्राह्मण का रूप धारण कर कुछ माँगने के लिए गये। राजा से वचन लेकर विश्वामित्र जी ने राजपाट, वैभव, कोष दान में माँगा। पीछे से कुछ दक्षिणा देने को भी कहा। राजा सारा वैभव छोड़ कर, रानी और पुत्र के साथ चल दिये किन्तु उन्होंने सत्य को नहीं छोड़ा। ब्राह्मण की दक्षिणा चुकाने के लिए राजा ने अपनी रानी और पुत्र को काशी के एक ब्राह्मण को दास दासी के रूप में बेच दिया और स्वयं एक डोम के यहाँ दास के रूप में रहने लगे। मरघट में कर बसूल करना राजा का कार्य बताया गया। राजा अपने सत्य को निभाने के लिये सब कुछ कठिनाइयाँ सहने को तैयार हो गये। अन्त में एक दिन ब्राह्मण के यहाँ पूजा के लिए फूल चुनने के लिये गये रोहित को एक काले भयंकर सर्प ने काट लिया। रानी ने विलाप किया किन्तु व्यर्थ, अन्त में रात्रि के अंधकार में ही रानी पुत्र के शव को लेकर मरघट पहुँची। जब राजा हरिश्चन्द्र ने एक स्त्री को बिना कर दिये हुये ही शव को जलाते देखा तो हरिश्चन्द्र वहाँ तुरन्त पहुँच गये और बोले स्वामी की आज्ञानुसार बिना मृतक कर दिये यहाँ कोई शव नहीं जला सकता है। किसी

प्रकार राजा को यह ज्ञात भी हो गया कि यह स्त्री उनकी रानी थी और उनका मृतक पुत्र, किन्तु राजा बिना कर लिये उसको शव जलाने की आज्ञा नहीं दे सकते थे। उनका तो सत्य से न डिगने का प्रण था। धन्य है सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र।

राजा सत्य की परीक्षा में सफल हुये। देखा तो धर्मराज, इन्द्र और विश्वामित्र सामने खड़े हैं। रोहित भी जी उठा। आकाश से पुष्प वर्षा होने लगी। अन्त में राजा अपनी परीक्षा में सफल होकर अयोध्या आये। उनका नाम आज भी अमर है।

ऊपर के उदाहरण से उपमन्यु तुम्हारी समझ में आगया होगा कि किस प्रकार महाराजा सत्य हरिश्चन्द्र ने 'हाँ' को 'हाँ' और 'नहीं' को 'नहीं' समझा। राजा दशरथ ने वचनों के पालन के लिये मृत्यु का आलिङ्गन किया। उनके मुख से निकले शब्द उनके सत्य पालक होने के कैसे परिचायक हैं:—

'रघुकुल रीति सदा चलि आई।
प्राण जाहिं पर वचन न जाई॥'

'चाहे प्राण चले जाएँ किन्तु बचनों का पालन करूँगा' कैसे प्रतिज्ञावान होने के द्योतक हैं। भगवान रामचन्द्रजी ने सत्य के पालन के लिये जंगलों में अनेक संकट सहे। महाराणा प्रतापसिंह अकबर की आधीनता स्वीकार करने के लिये 'नहीं' कह चुके थे। उन्होंने जीवन भर 'नहीं' का पालन किया। अरावली पर्वत पर जंगल में भटकते फिरे। बच्चों को घास की रोटी खाते देखकर रोपड़े किन्तु प्रलोभन से जीवन पर्यन्त 'नहीं' का पालन किया। गुरू गोविन्दसिंह सम्राट औरङ्गजेब से उसके धर्म का अनुयायी न होने के लिए 'नहीं' कह चुके थे। अनेक संकट पड़े। बच्चों को चिनती दीवार में खड़ा चिन दिया गया किन्तु सत्य से डिगे नहीं। भक्त प्रह्लाद से जब यह कहा गया कि तू भगवान का नाम लेना छोड़ दे। प्रह्लाद ने उत्तर दिया 'नहीं'। फलतः प्रह्लाद को अनेक प्रकार

के कष्ट दिये गये। पर्वत से समुद्र में फिकवाया गया। जलती हुई अग्नि में डाला गया किन्तु वह वीर विचलित नहीं हुआ। सत्य पर अडिग रहा। उसने अपने मुख से निकले हुए शब्द 'नहीं' का आजन्म अक्षरशः पालन किया। हकीकतराय बालक को मुसलमान होने के लिए कहा गया। उसने मुह फट उत्तर दिया 'नहीं'। बधिक की चमकती तलवार और जलती आँखों को देख कर भी उसने धर्म परिवर्तन की स्वीकृति नहीं दी। उसने 'नहीं' को 'नहीं' समझा। सुकरात ने मृत्यु का सहर्ष आलिङ्गन किया किन्तु सत्य का निर्वाह किया। ऊपर के सभी महापुरुषों ने सत्य का अक्षरशः पालन किया। उन्होंने हाँ को हाँ और नहीं को नहीं समझा।

अतएव प्रिय उपमन्यु ऊपर दिये हुये उदाहरणों से अब तुम्हारी समझ में आगया होगा कि बापू की यह सीख अनमोल है। समाज तथा व्यक्ति का कल्याण इस शिक्षा पर ही आश्रित है। जो व्यक्ति अथवा समाज इस शिक्षा का पालन करेगा, उसे सफलता अवश्य मिलेगी। इसके पालन से चरित्र का निर्माण होता है, आत्मानुशासन तथा आत्म नियंत्रण की भावना दृढ़ होती है। इस शिक्षा का पालन करना दूसरे शब्दों में सत्य का पालन करना है। सत्य पालन से चित्त वृत्तियों, कलुषित भावनाओं, और असत विचारों का विरोध होता है। सत्य के पालक में निर्भीकता, साहस, शील, सहिष्णुता, त्याग, धैर्य, सन्तोष आदि गुण स्वभावतः ही आजाते है। उदारता, कर्तव्यपरायणता आदि गुण तो सत्यव्रती के चरित्र के प्रमुख गुण हो जाते हैं। सत्यव्रती साधारण मनुष्यों से बहुत ऊँचा उठ जाता है। उसके सामने केवल एक मन्त्र होता है 'साँच को आँच नहीं'। उसी मन्त्र के सहारे वह सभी कठिनाइयों का हर्ष के साथ सामना करने को तैयार रहता है। सत्य के पालन से पारस्परिक द्वेष, कलह, कपट, छल, षड़यन्त्र की भावना का अन्त

हो जाता है। मानव जीवन में ऐसा क्षेत्र कोई नहीं जहाँ सत्य का पालन आवश्यक न हो। महात्मा गांधी जी ने इसी गुण के सहारे भारतवर्ष को स्वतन्त्रता प्राप्त कराई है। उन्होंने वकालत जैसे पेशे में भी पूर्णतः सत्य का पालन किया। राजनीति में तो सत्य की अति आवश्यकता है।

अतएव प्रिय उपमन्यु, बापू की अनमोल सीख 'हाँ को हाँ और नहीं को नहीं समझो' व्यक्ति कल्याण, समाज कल्याण, राष्ट्र कल्याण तथा विश्व कल्याण के लिए अति आवश्यक है। विद्यार्थी जीवन में इस शिक्षा का महत्व सर्वोपरि है क्योंकि विद्यार्थी जीवन में ही हमारे चरित्र का निर्माण होता है। इस जीवन में हमारे चरित्र में प्रवेश किये हुये गुण सारे जीवन में अपने दिव्य और अलौकिक प्रकाश से हमारे जीवन को आलोकित करते रहते हैं। मैं तुम्हें पहले बता चुका हूँ कि इस शिक्षा को अपनाने से दृढ़ता, निर्भीकता, उत्साह, धैर्य, साहस आदि गुण तुम्हारे चरित्र में स्वभावतः ही आ जायेंगे। अतः तुम्हारा कल्याण इसी शिक्षा का अक्षरशः पालन करने में है। अपने साथियों, सहपाठिओं आदि को इस अनमोल, अनुपम सीख के महत्व से अभिज्ञ करो। उन्हें समझाओ कि जीवन और भविष्य निर्माण में यह सीख किस प्रकार सहायता करेगी। तुम तो मन से, वचन से, कर्म से इसी शिक्षा के उपासक बनो। इसी शिक्षा का पालन करते हुये जीवन पथ पर बढ़े चलो। सदैव अमर वाक्य याद रक्खो—

'नभ टूटे, पृथ्वी गले, पर नहिं छोड़ें यह सीख'

एकादश पत्र,

विश्व-प्रेम और लोक-सेवा

प्रिय उपमन्यु,

इस पत्र में मेरा विचार तुमको मानव जीवन के एक पावन कर्तव्य का ज्ञान कराने का है। आज मैं तुम्हें समझाऊँगा कि वस्तुतः मानव-जीवन में विश्व-प्रेम और लोक-सेवा का क्या महत्व है? तुम जानते हो कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में रहकर ही अपना बौद्धिक तथा मानसिक विकास कर सकता है। यदि संसार में रहता हुआ कोई मनुष्य संसार से सम्बन्ध-विच्छेद करके सुख और समृद्धि की आशा करे, तो वह महा मूर्ख है। कारण स्पष्ट है। संसार में सब के हित एक दूसरे के हितों से जुड़े हुए हैं। अतएव उनकी पूर्ति पारस्परिक प्रेम तथा सेवा से हो सकती है! विश्व का निर्माण अनेक समाजों के सम्मिश्रण से हुआ है और समाज अनेक परिवारों के सम्मिश्रण से बना है। अतः सारा विश्व एक वृहत् परिवार का ही रूप है। इसलिए हमें सुखी जीवन बिताने के हेतु वृहत् परिवार के सम्पर्क में रह कर, प्रेम और सेवा के अलौकिक गुणों को अपनाना पड़ेगा। बिना पारस्परिक प्रेम, सेवा, बलिदान, सहयोग आदि के जीवन सुखी बनाना नितान्त असम्भव है।

संसार में मानव जीवन कर्तव्यों की एक लम्बी कहानी है। दूसरे शब्दों में यदि हम जीवन को कर्तव्य कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। कर्तव्य पालन में निस्वार्थ भावना का विशेष स्थान है। योगिराज भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है कि :—

'कर्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषु कदाचन'

अर्थात् मानव का अधिकार कर्म करने का है, फलाशा कभी नहीं। फल के लोभ से किया हुआ कार्य कर्तव्य नहीं कहा जा सकता है। इसलिए प्रिय उपमन्यु! तुम याद रक्खो कि अपना कर्तव्य अपने कल्याण के लिए नहीं अपितु विश्व कल्याण के लिए करना चाहिए। कर्तव्य पालक का दूसरा नाम आत्म-त्यागी है। संसार से प्रेम करने वाला तथा लोक सेवा के गुण को अपनाने वाला ही संसार में सच्चा त्यागी है। कविवर अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के शब्द अक्षरशः सत्य हैं। देखिए :—

'जी से प्यारा जगत हित औ लोक-सेवा जिसे है,
प्यारी! सच्चा अवनितल में आत्मत्यागी वही है।'

—प्रिय-प्रवास

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कर्तव्य की दृष्टि से तथा आत्मकल्याण की दृष्टि से विश्वप्रेम और लोक सेवा का मानव जीवन में बड़ा महत्व है।

'वसुधैव कुटुम्बकम् उदारचरितानाम्' अर्थात् उदार व्यक्तियों की सारी पृथ्वी ही कुटुम्ब होती है। वे सारे संसार से इसी प्रकार प्रेम करते हैं जैसे अपने कुटुम्ब से। उनका दृष्टिकोण, कुटुम्ब, जाति समाज तथा राष्ट्र के संकुचित बन्धनों में न बंधकर, अन्तर्राष्ट्रीय होता है। वे अपने हित का विचार न कर विश्व-हित तथा प्राणी-हित के चिन्तन में रहते हैं। मानवता का अर्थ यह नहीं है कि एक व्यक्ति अपने लाभ का प्रयत्न करे। दूसरों के हित का ध्यान रखने वाला अथवा सभी का भला चाहने वाला व्यक्ति संसार में मनुष्य कहलाने का अधिकारी हो सकता है। ऐसे व्यक्ति की ही सराहना की जाती है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने ठीक ही कहा है :—

'आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ-कोइ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिअ सोइ ॥'

सच्चा धर्म भी वही है, जो विश्व-प्रेम तथा लोक-सेवा के महत्व का समर्थन करे। धर्म का क्षेत्र संकीर्ण एवं संकुचित नहीं है। वह तो अत्यन्त व्यापक है। सर्वोच्च धर्म वही है जिसका दृष्टिकोण अन्तराष्ट्रीय हो। पूज्य महात्मा गाँधी जी का कहना था कि :—

'वैष्णव जन तो तेणे कहिए, जो पीड़ पराई जाणे रे।
पर दुःख उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे ॥'

अर्थात् सच्चा भगवान् का उपासक वही है जो दूसरों के दुःख को समझे। भगवान् को तो दीनबन्धु की संज्ञा दी गई है। अतः दीन, दुखियों तथा पीड़ितों की सहायता करना मानव का प्रथम कर्तव्य है। वस्तुतः दीनों की सेवा ही ईश्वर की सेवा है। यह सेवा प्रेम की व्यापकता पर ही निर्भर है। जब तक एक मानव दूसरे मानव अथवा प्राणी के दुःख को अपना दुःख नहीं समझेगा तब तक वह दूसरे की सेवा करने के लिए तत्पर नहीं हो सकता है। अतः विश्व कल्याण के लिए विश्व प्रेम की अति आवश्यकता है।

यदि गम्भीरतया विचार किया जाए तो संसार में प्रेम ही सर्वस्व है। बिना प्रेम के जीवन नीरस है। यदि अंधकार पूर्ण हृदय को आलोकित करने वाली वस्तु है, तो प्रेम। यदि हृदयन्त्री के उलझे हुए तारों को सुलझाने का कोई साधन है तो प्रेम। यदि मुरझाई हुई आशा कलिका को विकसित करने की किसी में शक्ति है तो प्रेम में। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रेम ही माधुर्य है तथा प्रेम ही रस है। प्रेम ही मधुर गीत तथा प्रेम ही सरस राग है। प्रेम के उपासक के लिए संसार में किसी ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। संत कबीर ने ठीक ही कहा है :—

'पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पण्डित हुआ न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम को पढ़ै, सो पण्डित होय॥'

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विश्व-प्रेम ही मानव जीवन की सार्थकता है। यदि आज संसार का प्रत्येक व्यक्ति विश्व प्रेम की भावना का अक्षरशः पालन करने लगे, तो विश्व में पूर्ण रूप शान्ति हो सकती है। आज हम देखते हैं कि संसार में यत्र, तत्र, सर्वत्र अशान्ति ही अशान्ति दिखाई देती है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र की स्वतन्त्रता को कुचलने के प्रयत्न में हैं। इसका एक मात्र कारण विश्व-प्रेम की भावना का अभाव है। इसी के कारण आज मानवीय आत्मा अति संकुचित है। आत्मा के संकुचित होने के कारण सभी मनुष्य अपने-अपने स्वार्थ में तत्पर हैं। आत्मा का विकास एवं विस्तार विश्व-प्रेम की भावना पर निर्भर है। विज्ञान तथा साहित्य आदि की उन्नति से आत्मिक विकास सम्भव नहीं है। आज हम देखते हैं कि वैज्ञानिक उन्नति के साथ-साथ युद्ध अधिक विनाशकारी होता जा रहा है। नित्य के नवीन-नवीन आविष्कारों से अशान्ति का वातावरण बढ़ता ही जा रहा है। आज विश्व का कोई भी राष्ट्र शान्त नहीं। सभी एक दूसरे से संशकित हैं। इसका एक मात्र कारण विश्व-प्रेम की भावना का अभाव ही है।

प्रिय उपमन्यु! उपर्युक्त बातों से तुम्हारी समझ में आ गया होगा कि विश्व में शान्ति का साम्राज्य स्थापित करने के लिए, सुख और चैन की वर्षा करने के लिए तथा प्राणिमात्र के हृदय से पारस्परिक भय को विलीन करने के लिए विश्व प्रेम की भावना का प्रसार होना अति आवश्यक है। इसी भावना के प्रसार से आपस की कलह का अन्त हो सकता है। सभी धर्मों का प्रथम उपदेश है 'अहिंसा परमोधर्म'। इसका मूलाधार प्रेम ही है। विश्व इतिहास

इस बात का साक्षी है कि महान् से महान् विश्व के विजेता भी अन्त में प्रेम से पराजित हुए हैं। महान् सम्राट अशोक कलिङ्ग की विजय करने पर भी अन्त में प्रेम द्वारा पराजित हुआ। हिंसा से अहिंसा को अपनाना इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। प्रेम के द्वारा किसी को अधिकार में करना अत्यन्त सरल है। अंगरेजी के किसी विद्वान् का कथन है :—

'To rule by love is far better than to rule by force'.

अर्थात् बलपूर्वक राज्य करने से प्रेम पूर्वक राज्य करना उत्तम है। इस प्रकार आज न्याय की स्थापना के लिए शक्ति का प्रयोग न कर प्रेम का प्रयोग किया जाए तो मान व जाति का कल्याण निश्चित है। किसी कवि ने विश्व में प्रेम की भावना का प्रसार करने के लिए कैसा सुन्दर कहा है :—

'मनुज का जीवन है अनमोल,
साधना है वह एक महान्।
सभी निज संस्कृति के अनुकूल
एक हो रचें राष्ट्र उत्थान।
इसलिए नहीं कि करें सशक्त,
निर्बलों को अपने में लीन—
इसलिए कि हों विश्व-हित हेतु,
समुन्नति-पथ पर सब स्वाधीन।'

प्रिय उपमन्यु! अतः तुम्हें पूर्ण रूप से विदित होना चाहिए कि लोक सेवा में ही जीवन को सफलता है। समाज सेवा से बढ़कर कोई दूसरा कर्तव्य नहीं है। इस कर्तव्य को न अपनाना पशु प्रवृत्ति को अपनाना है। देखिए :—

'यही पशु प्रवृत्ति है कि आप आप ही चरे।
वही मनुष्य है, जो मनुष्य के लिये मरे॥'

संसार में ऐसे अनेक महापुरुष हुए हैं जिन्होंने समाज सेवा के लिये सर्वस्व का बलिदान कर दिया। महात्मा गांधी जी का नाम समाज सेवकों की गणना में अमर रहेगा। उन्होंने भारतवर्ष से छूआछूत के भूत को भगाने के लिए भरसक प्रयत्न किया। हिन्दू मुसलमानों के एक्य को स्थापित करने के लिये उन्होंने अपने प्राणों की बाजी लगादी। आज भी पूज्य बापू जी का प्रेम और सेवा का दिव्य संदेश विश्व के कोने-कोने में व्याप्त है। दीनबन्धु सर एन्ड्रू विदेशी होते हुये भी भारत में दीनों की सेवा करने के लिये आये। इसका एक मात्र कारण उनके हृदय में विश्व प्रेम की भावना का समावेश ही था। विश्व प्रेम की भावना से प्रेरित होकर ही उन्होंने लोक सेवा के क्षेत्र को अपनाया। विश्व इतिहास ऐसे अनेक आदर्शों से भरा है।

सारांश यह है विश्व-प्रेम तथा लोक-सेवा से सारे संसार में शान्ति का अखण्ड साम्राज्य हो सकता है। इसी के द्वारा हम सच्चे विजयी बन सकते हैं। कवि के शब्दों में विश्व-प्रेमी तथा लोक सेवक ही सच्चा साधु है तथा उसके हृदय में ही ईश्वर का वास है। देखिये :—

'वास उसी में है विभुवर का, बस सच्चा साधु वही।
जिसने दुखियों को अपनाया, बढ़कर उनकी बाँह गही॥
आत्म स्थिति जानी उसने ही, पर हित जिसने व्यथा सही।
पर हितार्थ जिनका वैभव है, है उनसे यह धन्य मही॥'

आशा है कि तुम विश्व प्रेम तथा लोक सेवा के मार्ग को अपनाओगे।

तुम्हारा शुभेच्छु

राम

राष्ट्रीय-झंडा के विषय में ज्ञातव्य बातें

झंडारोहण

१—झण्डे को सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक फहराना चाहिए। राज्य द्वारा निर्दिष्ट छुट्टियों तथा ऐतिहासिक एवं विशेष पर्वों पर झंडा फहराना चाहिये।

२—अन्य झण्डों के साथ राष्ट्रीय झण्डा दाहिनी ओर तथा सबसे ऊँचा होना चाहिये।

३—शोक प्रकट करने के लिये झण्डा अर्द्ध दण्ड पर फहराने के लिये झण्डा ऊपर के सिरे पर एक क्षण के लिए ले जाकर, उतारना चाहिये। दिन के अन्त में जब झण्डा पूर्ण रूप से उतारा जाये। तदनन्तर नीचे उतारना चाहिए।

४—जब झण्डा फहराने के योग्य न रहे, तो उसका ऐसा प्रयोग किया जाये कि उसका अपमान न हो। झण्डा पुराना होने पर समुचित आदर और सम्मान के साथ एकान्त में जला देना चाहिये।

झण्डा–अभिवादन

१—जब किसी जुलूस या परेड के साथ झण्डा जारहा हो तो 'सावधान' की दशा में खड़े होकर उपस्थित व्यक्तियों को झण्डे की ओर मुख करके अभिवादन करना चाहिये।

झण्डे के सम्मुख शपथ लेना

१—सब करबद्ध एकसाथ निम्नलिखित रूप से शपथ ले सकते हैं:-

"मैं भारत संघ के झण्डे के प्रति तथा उस भारत राष्ट्र के प्रति जिसका वह प्रतीक है अटल भक्ति की शपथ लेता हूँ। हमारा राष्ट्र अखण्ड हो, सबके लिए स्वतन्त्रता और न्याय सुलभ हो।

निषेध

१—झण्डे को किसी प्रकार न झुकाना चाहिये।

२—झण्डे को कभी इस प्रकार न फहराया जाये कि केशरिया रंग नीचे आजाये।

३—झण्डे को कभी पृथ्वी के समानान्तर न ले जाया जाये।

४—झण्डे को छत में नीचे सजाने के लिये प्रयुक्त न करना चाहिए

५—झण्डे पर किसी प्रकार को लिखावट नहीं होनी चाहिये।

६—झण्डे को गद्दी या रूमाल या बक्सों पर बनाना या काढ़ना चाहिए।

७—राष्ट्रीय झण्डे का किसी प्रकार अपमान नहीं होना चाहिए।